# श्री राम कथा संस्थान पर्थ

## त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष २०२१, अंक १ (अक्टूबर - दिसंबर २०२१)

# ।। सनातन रत्न ।।

## दीपावली अंक २०२१

**कार्यालय:** ३५ मायना रिट्रीट, हिलरीज, पर्थ, ऑस्ट्रेलिया – ६०२५
**वेबसाइट:** https://shriramkatha.org
**ई-मेल:** srkperth@outlook.com
**टेलीफोन:** +६१ (०८) ९४०१ १५४३

## श्री राम कथा संस्थान पर्थ उद्देश्य

- श्री राम कथा संस्थान भगवान् स्वामी श्री रामानंद जी महाराज (१४वीं शताब्दी) की शिक्षाओं पर आधारित एक सनातन वैष्णव धार्मिक संस्था है।
- श्री संस्थान का सिद्धांत धर्म, जाति, लिंग एवं नैतिक पृष्ठभूमि के आधार पर भेदभाव रहित है। 'हरि को भजे सो हरि को होई' संस्थान का मूल मन्त्र है।
- श्री संस्थान का मानना है कि शुद्ध हृदय एवं निःस्वार्थ भाव भक्ति ईश्वर को अति प्रिय है। सभी प्रभु-भक्त एक दूसरे के भाई बहन हैं।
- ब्रह्म मनोभाव: भगवान् श्री राम, माता सीता एवं उनके विविध अवतार ही सर्वोच्च ब्रह्म हैं। वह सर्व-व्याप्त एवं विश्व के सरंक्षक हैं।
- आत्मा मनोभाव: आत्मा का अस्तित्व सर्वोच्च ब्रह्म के परमानंद पर निर्भर है। आत्मा को सर्वोच्च ब्रह्म ही निर्देशित एवं प्रबुद्ध करते हैं। श्री राम, माता सीता एवं उनके अवतार ही जीवन का अंतिम उद्देश्य मोक्ष दिलाने में समर्थ हैं।
- माया मनोभाव: माया प्रकृति के तीन गुण - सत, रज और तमस, के प्रभाव से प्राकट्य होती है। माया को सर्वोच्च ब्रह्म ही नियंत्रित करने में समर्थ हैं। सर्वोच्च ब्रह्म पर ध्यान केंद्र करने से माया का विनाश होता है और जन्म-मृत्यु के चक्र से छुटकारा मिल मोक्ष की प्राप्ति होती है।
- श्री संस्थान इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु निरंतर सनातन धार्मिक पत्रिकाएं, पुस्तकें, पुस्तिकाएं, काव्य ग्रन्थ आदि की रचनाएं एवं प्रकाशन करती है। साथ ही, समय समय पर श्री राम एवं अन्य धार्मिक कथाओं के संयोजन का भी प्रयास करती रहती है।

**सेवा प्रदाता**

| | |
|---|---|
| डॉ यतेंद्र शर्मा: | संस्थापक एवं अध्यक्ष |
| डॉ जुगल अगरवाला: | सह-संस्थापक एवं मुख्य सलाहकार |
| श्रीमति मंजू शर्मा: | सह-संस्थापक एवं सलाहकार - प्रकाशन |
| श्री रवि मरिअप्पा: | सलाहकार - जन संपर्क |
| श्री अंशुल शर्मा: | सदस्य |

**पत्रिका सम्पादन**

| | |
|---|---|
| मुख्य सम्पादक: | डॉ यतेंद्र शर्मा |

# क्रमिका

शुभ सन्देश ..... 4
सम्पादकीय ..... 8
श्री राम राज्याभिषेक ..... 11
नरकासुर वध ..... 25
शिरडी साईंनाथ का भगवद्प्रेम ..... 29
श्रीमद्भागवद्गीता - स्वामी श्री रामसुख दास जी के मुख से ..... 36
पढ़ो, समझो और करो - नैतिक कहानी ..... 41
बाल खंड मूर्ति पूजा का महत्व: स्वामी विवेकानंद जी के मुख से ..... 44
श्रीमदभगवद-भोग व्यंजन खंड ..... 49
दीपावली पूजन विधि ..... 53

# शुभ सन्देश

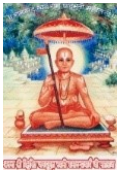

**वयोवृद्ध संत शिरोमणि श्री रामरत्न श्री चंद्रवल्लभ पालीवाल जी**

प्रिय डॉ यतेंद्र, 'सनातन रत्न' पत्रिका प्रकाशन हेतु धन्यवाद। पत्रिका स्वयं में ज्ञान का भंडार है। शब्दों का चयन सर्वश्रेष्ठ है। आपका एवं संस्था 'श्री राम कथा संस्थान' का प्रयास सराहनीय और प्रशंसनीय है। पत्रिकाएं अंधकार को दूर करके ज्ञान का प्रकाश फैलाती हैं। आपकी पत्रिका भी समाज में यही काम करेगी, ऐसा मेरा विश्वास है। आपके विचार उच्च हैं, भाव उत्तम हैं। सर्व शक्तिमान आपका पथ प्रदर्शित करे, यही मेरी हार्दिक शुभकामनाएं, भावना और चाहत है। शुभेच्छु, चंद्र वल्लभ पालीवाल

**स्वामी श्री आत्मेशानंद जी, श्री रामकृष्ण मिशन, ऑस्ट्रेलिया**

श्री यतेन्द्र जी, आप 'श्री राम कथा संस्थान' के माध्यम से आस्थिकों के लाभ के लिए दीपावली अंक के रूप में एक त्रैमासिक पत्रिका 'सनातन रत्न' लाने का प्रयास कर रहे हैं। प्रकाशन में मुझे यह जानकर बहुत खुशी हो रही है कि इसमें बहुत सोच समझ कर लेख प्रस्तुत किए गए हैं। मैं भगवान से प्रार्थना करता हूं कि आपके प्रयासों को भगवान की कृपा से आशीर्वाद मिले ताकि अधिक से अधिक लोगों को प्रकाशन को पढ़ने और समझने से मन की शांति मिल सके। मैं श्री' राम कथा संस्थान' के सदस्यों को इस सेवा प्रारंभ करने के लिए बधाई देता हूं, और प्रार्थना करता हूं कि आपको आने वाले लंबे समय तक इस सेवा करने के लिए शक्ति और प्रेरणा प्रदान की जाए। स्वामी आत्मेशानंद, वेदांत केंद्र, ब्रिस्बेन

**महामहिम सुश्री दन्तु चरनदासी जी, प्रधान कौंसल, कॉन्सुलेट जनरल ऑफ़ इंडिया, पर्थ**

प्रिय डॉ यतेंद्र शर्मा, श्री राम कथा संस्थान के समन्वित प्रयास से जारी त्रैमासिक पत्रिका 'सनातन रत्न' के प्रथम अंक की स्थापना और प्रकाशन के लिए आपको बहुत बधाई। मैं इस प्रकाशन को तैयार और प्रकाशित करने के लिए आवश्यक समर्पण और अनुशासन की प्रशंसा करती हूँ। यह पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया के मौजूदा बहुभाषी और बहुसांस्कृतिक पहलू को समृद्ध करेगा। इस त्रैमासिक पत्रिका की सफलता की कामना करते हुए मैं आशा करती हूँ कि यह

प्रकाशन व्यापक भारतीय डायस्पोरा के पढ़ने के लिए एक वार्षिक प्रकाशन बन जाए। आपका प्रकाशन सफल हो। ढेर सारी शुभ कामनाओं के साथ। दन्तु चरनदासी

**श्री प्रकाश मेहता जी, हिन्दू कॉउन्सिल ऑफ़ ऑस्ट्रेलिया**

त्रैमासिक पत्रिका 'सनातन रत्न' के प्रकाशन के शुभ अवसर पर श्री राम कथा संस्थान (पंजीकृत) को अभिननंदन एवं बधाई देते हुए मुझे अति प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। पिछले कई वर्षों से श्री राम कथा संस्थान पर्थ में १४वीं शताब्दी के भगवतस्वरूप स्वामी श्री रामानंद जी महाराज की शिक्षाओं का प्रचार अपने सदस्यों में ही नहीं बल्कि पूर्ण हिन्दू समुदाय के लिए भक्तिपूर्ण कार्यक्रमों एवं साहित्य के प्रकाशन से करती आ रही है, यह जानकार मुझे अत्यंत प्रसन्नता है। भारत का आदर्श श्री राम राज्य की स्थापना है, जिससे दुष्टता समाप्त हो, समाज में सामंजस्यता आए एवं विश्व हित में सभी कार्यरत रहें। मेरा ऐसा विश्वास है कि यह पत्रिका भारत की शास्वत बुद्धिमता तथा प्राचीन संस्कृति का सन्देश देने में सहायक होगी जिससे सनातन धर्म को सरंक्षण तो मिलेगा ही, हिन्दू मान्यताओं को भी बल मिलेगा। इस अवसर पर मैं हिन्दू कॉउन्सिल ऑफ़ ऑस्ट्रेलिया की ओर से 'सनातन रत्न' के सम्पादन समूह को अपनी शुभ कामनाएं देता हूँ। प्रकाश मेहता

**श्री दामजी भाई कोरिया जी, हिन्दू स्वयं सेवक संघ, ऑस्ट्रेलिया**

यतेंद्र जी, आपका बहुत बहुत धन्यवाद जो आपने बहुत मेहनत से इस पत्रिका की रचना की और अब प्रथम अंक दीपावली के उत्सव पर प्रकाशित करने जा रहे हैं। ''सनातन रत्न'' प्रकाशित करना सहज नहीं है। पत्रिका के बहुत अच्छे प्रकरण हैं, जो सनातनी विचार और व्यवहारी लोगो को पसंद आएँगे। दामजी भाई कोरिया

**श्रीमति नेहा सिंहल जी, विश्व हिन्दू परिषद्, वेस्टर्न ऑस्ट्रेलिया**

मैं 'सनातन रत्न' पत्रिका के प्रकाशन द्वारा डॉ यतेंद्र शर्मा के हिंदू समुदाय में सनातन धर्म को बढ़ावा देने के प्रयास की सराहना करती हूँ। मेरा ऐसा मानना है कि हमें सनातन धर्म के प्रसार के लिए प्रतिबद्ध रहना चाहिए क्योंकि अपनी महान भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति की रक्षा करना हम सब का व्यतिगत धर्म है। मेरा विश्वास है कि इस पत्रिका का प्रकाशन निश्चय रूप से उन लोगों के लिए उपयोगी और सार्थक होगा जो अपनी संस्कृति और मूल प्रणाली के बारे में

जानने के उत्सुक हैं। इस विशाल कार्य के लिए मैं 'श्री राम कथा संस्थान' को प्रोत्सहित करती हुई और उनकी सफलता के लिए कामना करती हूँ। नेहा सिंहल

**श्रीमति रश्मि लोयलका जी, हिंदी समाज ऑफ़ वेस्टर्न ऑस्ट्रेलिया**

मैं श्री राम कथा संस्थान के सम्पादकीय मंडल को धन्यवाद देना चाहूंगी कि उन्होंने सनातन धर्म की गूढ़ गहराइयों से चुनकर कुछ ज्ञान रूपी मोती हमारे समक्ष प्रस्तुत किये हैं। दीपावली के पावन अवसर पर प्रकाशित इस पहली त्रैमासिक पत्रिका "सनातन रत्न" के लिए बहुत-बहुत बधाई। इस में जहाँ रामायण के प्रसंगों पर टीका है, वहीं अन्य पौराणिक कथाएं से पूर्ण लेख और नैतिक विषयों पर सुन्दर कहानियां भी हैं। हिंदी भाषा में प्रकाशित इस पत्रिका की सराहना करते हुए मैं हिंदी समाज के सदस्यों की ओर से अभिनन्दन और धन्यवाद करना चाहूंगी।
रश्मि लोयलका

**श्री अनुराग सक्सेना जी, हिंदी समाज ऑफ़ वेस्टर्न ऑस्ट्रेलिया**

आधुनिकीकरण के नाम पर सनातन सिद्धांतों की सत्यता एवं उपयोगिता को लम्बे समय से उपेक्षित किया गया है। ऐसे समय में इस पत्रिका 'सनातन रत्न' का प्रकाशन निःसंदेह सामयिक तथा प्रशंसनीय है। मैं इसकी सफलता की कामना करता हूँ।
अनुराग सक्सेना

**श्री कुशल कुशलेंद्र जी, हिंदी साहित्यकार, लेखक एवं कवि, हिंदी समाज, पर्थ**

श्री राम कथा संस्थान की ओर से 'सनातन रत्न' के पहले अंक के प्रकाशन के लिए बहुत साधुवाद और बधाई। यह पत्रिका सनातन धर्म और प्राचीन भारतीय परंपराओं के उदाहरणों से भरी पड़ी है। इस पत्रिका की सारी रचनाएं बहुत ही अच्छी तरह से एकत्रित की गई है, और रामायण से लेकर भगवत गीता सम्बंधित विषयों को अपने आप में संजोये हुए है। यह एक बहुत ही सराहनीय पहल है जो ना सिर्फ हमारी आने वाली पीढ़ी को भारतीय संस्कृति, शास्त्र ज्ञान, वेद और उपनिषद से जोड़ेगा बल्कि उससे पहले की पीढ़ीओं को भी हमारी सांस्कृतिक और ऐतिहासिक धरोहर से पुनः साक्षात्कार कराने में सफल होगी। मैं श्री' राम कथा संस्थान' का आभार व्यक्त करता हूँ। यह निश्चित रूप से पाठकों की ज्ञान वृद्धि एवं आध्यात्मिक प्रगति का कारण बनेगी।
कुशल कुशलेंद्र

**श्री अतुल गर्ग जी JP, सरंक्षक, FIAWA**

मैं, यतेंद्र जी, अध्यक्ष, श्री राम कथा संस्थान को नए त्रैमासिक पत्रिका 'सनातन रत्न' के प्रकाशन पर शुभ कामनाएं प्रेषित करता हूँ। हिन्दू धर्मग्रन्थ पर आधारित इसका प्रकाशन समाज के लिए अति लाभकारी होगा एवं सनातन धर्म और भारतीय संस्कृति के विस्तार में योगदान देगा, ऐसा मेरा विश्वास है। मैं इनके प्रयास का आदर के साथ सराहना करता हूँ और सफलता की कामना करता हूँ। अतुल गर्ग

**श्री राम कृष्ण बंसल जी, मेन्टल हेल्थ फाउंडेशन**

ऑस्ट्रेलिया में सनातन धर्म की महत्वा, सत्यता एवं आवश्यकता प्रदर्शित करते हुए त्रैमासिक पत्रिका 'सनातन रत्न' के प्रथम अंक की अग्रिम प्रतिलिप मुझे प्राप्त होने का सम्मान प्राप्त हुआ। श्री राम और शिरडी साईंनाथ से लेकर श्रीमद्भागवद्गीता के विषय में लिख कर इस पत्रिका ने एक रिक्तता को भरने का एक प्रयास किया है, और अपनी अभिव्यक्ति दी है। हृदयस्थ बधाई व शुभकामनाएं देते हुए मैं सनातन धर्म के दर्पण 'सनातन रत्न' द्वारा सामाजिक विकास के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ। रामकृष्ण बंसल

**श्रीमति संगीता बंसल जी, नारायण सेवा संस्थान, ऑस्ट्रेलिया**

आदरणीय यतेंद्र शर्मा जी, श्री राम कथा संस्थान की प्रथम त्रैमासिक पत्रिका के प्रकाशन के उपलक्ष्य में इससे जुड़े सभी सदस्यों को हार्दिक बधाई। मुझे यह जानकार अत्यंत प्रसन्नता हुई कि श्री राम कथा संस्थान से जुड़े हुए संतों की इच्छानुसार ऑस्ट्रेलिया में सनातन धर्म की महत्वा, सत्यता, एवं आवश्यकता प्रदर्शित करते हुए एक त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन होने जा रहा है। यह आपके कठोर परिश्रम, और सतत परिश्रम का ही परिणाम है कि हम सब पर्थ वासिओं को इस पत्रिका का लाभ प्राप्त होगा। आपने जिस प्रकार अपना जीवन हिन्दू धर्म के प्रचार प्रसार के लिए लगाया है, अति सराहनीय है। धर्म ग्रंथों को लिखने एवं प्रकाशित करने के लिए निश्चय ही गहरी निष्ठा के साथ साथ अद्वितीय प्रतिभा एवं समर्पण की भी आवश्यकता होती है। आपके इस उत्कृष्ट पहल के लिए शुभकामनाएं देते हुए आपके सभी आगामी प्रयासों की सफलता की कामना करती हूँ। शुभकामनाओं सहित, संगीता बंसल

# सम्पादकीय

दीपावली के शुभ अवसर पर मेरी व्यक्तिगत एवं सभी श्री राम कथा संस्थान के सदस्यों एवं जुड़े हुए संतों की ओर से आप सभी को बहुत बहुत बधाई एवं शुभ कामनाएं। विघ्नविनाशक श्री गणेश आपको जीवन में हर बाधा से दूर रखते हुए सुख, शांति एवं वैभव प्रदान करें और माँ लक्ष्मी ऐश्वर्य एवं धन-धान्य से आपको सदैव सींचतीं रहें।

दीपावली का उत्सव आज सम्पूर्ण भारत में ही नहीं, पूरे विश्व में एक पावन उत्सव के रूप में मनाया जाता है। भारत देश एवं विश्व के विविध धर्म एवं सम्प्रदाय अनुयायी इस उत्सव को उसी चाव और उत्साह से मनाते हैं जैसे सनातन धर्म अनुयायी। इसका विशेष कारण यह भी है कि विभिन्न सम्प्रदायों में कार्तिक अमावस्या की पावनता का विभन्नता के साथ विशेष महत्व है। जहाँ वैष्णव श्री राम भक्त इसे भगवान् श्री राम के १४ वर्ष वनवास के बाद, जिस समय संतों की रक्षा हेतु उन्होंने राक्षसों का निर्वाण किया, अयोध्या लौट राज सिंहासन पर आसीन हो राम-राज्य की स्थापना की, इस प्रसन्नता पर घरों को दीपों से प्रज्वल्लित कर उत्सव मनाते हैं, वहीं श्री कृष्ण भक्त कार्तिक चतुर्दसी एवं अमावस्या के दिन भगवान श्री कृष्ण द्वारा नरकासुर वध एवं नारी मुक्ति दिवस की प्रसन्नता में इसे मनाते हैं। इसी दिवस समुद्र मंथन से माँ लक्ष्मी प्रगट हुई थीं और उन्होंने भगवान विष्णु को अपने पति के रूप में स्वीकार किया था, अतः वैष्णव समाज इस दिन को माँ लक्ष्मी के जन्मदिन एवं पाणिग्रहण दिवस के रूप में मना उनकी स्तुति कर ऐश्वर्य एवं धन-धान्य में प्रगति की आराधना करते हुए नव वर्ष का आगमन करता है। माँ लक्ष्मी के पश्चात समुद्र मंथन से महर्षि धन्वंतरि का भी इसी दिन प्रकाट्य हुआ था, जिन्होंने जन समुदाय को नीरोग बनाने के लिए आयुर्वेद की रचना की। अतः इस दिवस को आरोग्य दिवस के रूप में भी मनाया जाता है। कार्तिक अमावस्या के दिन ही भगवान नरसिंह ने हिरण्यकश्यप का वध कर प्रह्लाद का राज्याभिषेक किया था, अतः वैष्णव सम्प्रदाय इस दिवस को मुक्ति दिवस

के रूप में भी मनाता है। इसी दिवस सत्य के प्रतीक पांडव अपने चचेरे भाई कौरवों द्वारा अन्याय से थोपे हुए १२ वर्ष का वनवास एवं एक वर्ष का अज्ञातवास पूरा कर राजधानी हस्तिनापुर लौटे थे, अतः धर्म परायण समुदाय इसे असत्य पर सत्य की जीत के रूप में मनाता है। महावीर स्वामी को इसी दिन मोक्ष की प्राप्ति हुई थी, अतः जैन समाज के लिए भी यह दिवस अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसी दिवस सन १५७७ में अमृतसर में स्वर्ण मंदिर का शिल्यान्यास हुआ था, अतः यह दिवस सिख समुदाय के लिए भी अति पावन है। वैष्णव समाज के अति पूज्य स्वामी श्री रामतीर्थ जी का जन्म एवं निर्वाण दोनों ही इस दिन हुए थे। इन्हीं सब कारणों से दीपावली, आध्यात्मिक अन्धकार पर आन्तरिक प्रकाश, अज्ञान पर ज्ञान, असत्य पर सत्य और बुराई पर अच्छाई की जीत का उत्सव है।

इस अंक में पौराणिक कथाओं पर आधारित दीपावली से सम्बंधित दो प्रसिद्ध कथाएं, श्री राम राज्याभिषेक एवं नरकासुर वध, को प्रस्तुत किया जा रहा है। आशा है दोनों ही लघु कथाएं आप को रोचक लगेंगीं और हमारी नई पीढ़ी को ज्ञानवर्धक होंगी। इसके साथ ही एक नैतिक कथा की प्रस्तुति भी की गई है। आज के युग के एक महान संत शिरडी साईं बाबा को श्री राम और भगवान् विष्णु से अत्यंत प्रेम था। उनके भगवद प्रेम की एक कहानी 'श्री साईं सच्चरित्र' से उद्धृत कर दी गई है।

कई भगवद प्रेमीओं ने अनुरोध किया कि पत्रिका में श्रीमदभागवद्गीता की आज के युग में व्यावहारिकता के बारे में भी कुछ प्रकाश डाला जाय। अतः अति पूज्यनीय स्वामी श्री रामसुख दास जी के मुख से उनकी श्रीमद्भागवद्गीता की विवेचना के प्रथम अध्याय के प्रथम श्लोक के अंश प्रस्तुत किये गए हैं, जो अगले अंको में क्रमशः निरंतर प्रस्तुत किये जाएंगे।

बाल खंड में स्वामी विवेकानंद जी द्वारा अलवर नरेश को दिए गए मूर्ति पूजा की महत्वा के बारे में प्रवचन प्रस्तुत किये गए हैं। ऐसी आशा की जाती है कि स्वामी जी का यह प्रवचन बच्चों के लिए उपयोगी होगा। वैष्णव भोजन खंड

में प्रसाद हेतु खीर बनाने की विधि प्रस्तुत की गई है। आशा है यह सब प्रस्तुतियां आपके मनभावन होंगी।

एक लम्बे समय से श्री राम कथा संस्थान से जुड़े हुए संतों की ऐसी इच्छा थी कि ऑस्ट्रेलिया में सनातन धर्म की महत्वा, सत्यता एवं आवश्यकता प्रदर्शित करते हुए एक त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन किया जाय। समय के अभाव में ऐसा अब तक नहीं हो सका इसके लिए मैं स्वयं और सभी श्री राम कथा संस्थान के सदस्य क्षमाप्रार्थी हैं। हम अपना प्रथम अंक इस दीपावली के अवसर पर प्रकाशित करने का प्रयास कर रहे हैं। इस प्रकार पत्रिका प्रकाशन का यह हमारा प्रथम अवसर है, और हममें से किसी को भी पत्रिका प्रकाशन का कोई अनुभव भी नहीं है। अतः हमारी त्रुटियों पर ध्यान न दे हमारे भावों को समझते हुए हमें त्रुटियों के लिए क्षमा करें।

एक बार फिर से शुभ दीपावाली पर बधाई एवं शुंभ कामनाएं देते हुए,

आपका अपना, प्रभु के चरणों में,

यतेंद्र शर्मा

अध्यक्ष एवं मुख्य सम्पादक

**श्री राम कथा संस्थान पर्थ**

दीपावली २०२१ अंक

# श्री राम राज्याभिषेक

श्री राम लंकाधिपति रावण एवं उसके समस्त परिवार को मोक्ष प्रदान कर, प्रतिबिंबित सीता को अग्नि को सौंप एवं प्राकृत सीता से साक्षात्कार होने पर अपने सखाओं के साथ अवध जाने की तैयारी में हैं। उन्हें प्रति क्षण भरत की चिन्ता सता रही है। अगर १४ वर्ष वनवास की अवधि पूर्ण होने पर समय पर वह अयोध्या नहीं लौटे तो कहीं भरत अपना जीवन ही न त्याग दें। श्री राम की मनोस्थिति देख लंकापति श्री विभीषण तुरंत पुष्पक विमान का आवाहन करते हैं। पुष्पक विमान के आने पर सर्व प्रथम सीता प्रवेश करती हैं। अभी उन्होंने पुष्पक विमान में कदम रखा ही था कि हृदय में अपराध बोध की अनुभूति होने लगी। कैसा अपराध बोध? श्री राम एवं उनकी सेना ने तो रावण को परिवार सहित एवं सभी उसके अनुयायी अत्याचारी राक्षसों को निर्वाण दिया है। इस से तो जग में धर्म की रक्षा हुई है। तभी उनके अंतर्मन से एक स्वर उठता है, 'हे सीते, तेरे पति ने रावण का वध कर एक ब्रह्म-हत्या का पाप अपने सर पर ले लिया है। इस पाप का प्रायश्चित किए बिना लंका से प्रस्थान करने पर अशुभ ही अशुभ होगा।'

सीता तुरंत पुष्पक विमान से बाहर निकलती हैं, और पति श्री राम को इस अपराध बोध की भावना से अवगत कराती हैं।

'अवश्य ही ऋषि पुत्र रावण की हत्या एक ब्रह्म-हत्या है, और इसका प्रायश्चित आवश्यक है प्रिये। इस तथ्य की ओर मेरा ध्यान आकर्षित करने के लिए मैं अपना आभार प्रकट करता हूँ,' बोले श्री राम।

**ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमः ।**
**महान्ति पातकान्याहुः संसर्गश्चापि तैः सह ।।**

तब श्री राम ने तुरंत श्री हनुमान जी को बुलाया और उन्हें महर्षि भारद्वाज के प्रयाग आश्रम जाने का आदेश दिया। महर्षि भारद्वाज ही इस ब्रह्म-हत्या से मुक्ति का मार्ग सुझा सकते हैं।

श्री राम के आदेश का तुरंत पालन करते हुए पवन गति से श्री हनुमान जी महर्षि भारद्वाज जी के आश्रम प्रयाग पहुंचे और उन्हें सभी समाचारों से अवगत कराया। श्री हनुमान जी के मधुर वचन सुन महर्षि ने उन्हें अपने गले से लगाया और बोले, 'हे पवनपुत्र, श्री राम तो स्वयं भगवान विष्णु के अवतार और सर्व ज्ञानी हैं। मैं उन्हें ब्रह्म-हत्या से मुक्ति का मार्ग बताऊँ, अवश्य ही यह छोटे मुँह बड़ी बात होगी। मैं उनका भक्तों के प्रति आदर समझते हुए जो मान उन्होंने मुझे दिया, उसके लिए नतमस्तक हूँ। सर्व विदित है कि ब्रह्म-हत्या के पाप से मुक्ति देवों के देव महादेव ही दे सकते हैं। अतः मेरा ऐसा विचार है कि महादेव के मंदिर की स्थापना कर उनकी स्तुति की जाए। महादेव स्वयं प्रगट हो सब पापों से मुक्त कर देंगे।'

महर्षि भारद्वाज के विचार सुन, उनसे आज्ञा ले, श्री हनुमान जी ने तुरंत लंका को प्रस्थान किया और वहां पहुँच श्री राम को महर्षि द्वारा बताई हुई ब्रह्म-हत्या से मुक्ति की विधि से अवगत कराया।

श्री राम ने तब वहां महादेव मंदिर की स्थापना की जो आज भी लंका में अशोक वाटिका के समीप स्थित है। विधिवत महादेव का पूजन किया।

पशूनां पतिं पापनाशं परेशं गजेन्द्रस्य कृत्तिं वसानं वरेण्यम ।
जटाजूटमध्ये स्फुरद्गाङ्गवारिं महादेवमेकं स्मरामि स्मरारिम ।१।

महेशं सुरेशं सुरारातिनाशं विभुं विश्वनाथं विभूत्यङ्गभूषम् ।
विरूपाक्षमिन्द्वर्कवह्नित्रिनेत्रं सदानन्दमीडे प्रभुं पञ्चवक्त्रम् ।२।

गिरीशं गणेशं गले नीलवर्णं गवेन्द्राधिरूढं गुणातीतरूपम् ।
भवं भास्वरं भस्मना भूषिताङ्गं भवानीकलत्रं भजे पञ्चवक्त्रम् ।३।

शिवाकान्त शंभो शशाङ्कार्धमौले महेशान शूलिञ्जटाजूटधारिन् ।
त्वमेको जगद्व्यापको विश्वरूप: प्रसीद प्रसीद प्रभो पूर्णरूप ।४।

परात्मानमेकं जगद्बीजमाद्यं निरीहं निराकारमोंकारवेद्यम् ।
यतो जायते पाल्यते येन विश्वं तमीशं भजे लीयते यत्र विश्वम् ।५।

न भूमिर्न चापो न वह्निर्न वायुर्न चाकाशमास्ते न तन्द्रा न निद्रा ।
न गृष्मो न शीतं न देशो न वेषो न यस्यास्ति मूर्तिस्त्रिमूर्तिं तमीड ।६।

अजं शाश्वतं कारणं कारणानां शिवं केवलं भासकं भासकानाम् ।
तुरीयं तम: पारमाद्यन्तहीनं प्रपद्ये परं पावनं द्वैतहीनम ।७।

नमस्ते नमस्ते विभो विश्वमूर्ते नमस्ते नमस्ते चिदानन्दमूर्ते ।
नमस्ते नमस्ते तपोयोगगम् नमस्ते नमस्ते श्रुतिज्ञानगम् ।८।

प्रभो शूलपाणे विभो विश्वनाथ महादेव शंभो महेश त्रिनेत् ।
शिवाकान्त शान्त स्मरारे पुरारे त्वदन्यो वरेण्यो न मान्यो न गण्य: ।९।

शंभो महेश करुणामय शूलपाणे गौरीपते पशुपतेपशुपाशनाशिन् ।
काशीपतेकरुणयाजगदेतदेकस्त्वंहंसि पासिविदधासिमहेश्वरोऽसि ।१०।

त्वत्तो जगद्भवति देव भव स्मरारे त्वय्येव तिष्ठति जगन्मृड विश्वनाथ ।
त्वय्येव गच्छति लयं जगदेतदीश लिङ्गात्मके हर चराचरविश्वरूपिन ।११।

देवों के देव महादेव उनकी अर्चना से प्रसन्न हो तब प्रगट हुए एवं ब्रह्म-हत्या से उन्हें मुक्ति दी।

प्रसन्न चित श्री राम तब अपनी धर्म-पत्नी सीता एवं सभी सखाओं के साथ पुष्पक विमान में सवार हुए, और चल दिए अयोध्या की ओर। मार्ग में श्री राम ने सीता को वह सभी पवित्र स्थल दिखाए जहां जहां से वह उनकी खोज करते हुए पारगमन हुए थे।

श्री रामचरितमानस में गोस्वामी तुलसी दास जी ने इसका चित्रण बड़े ही रोचक ढंग से किया है।

**कह रघुबीर देखु रन सीता। लछिमन इहाँ हत्यो इँद्रजीता॥**
**हनूमान अंगद के मारे। रन महि परे निसाचर भारे॥**

श्री रघुवीर जी ने कहा, 'हे सीते, रणभूमि देखो। लक्ष्मण ने यहाँ इंद्र को जीतने वाले मेघनाद को मारा था। हनुमान् और अंगद के मारे हुए ये भारी भारी निशाचर रणभूमि में पड़े हैं।'

**कुंभकरन रावन द्वौ भाई। इहाँ हते सुर मुनि दुखदाई॥**

'देवताओं और मुनियों को दुःख देने वाले कुंभकर्ण और रावण दोनों भाई यहाँ मारे गए।'

**इहाँ सेतु बाँध्यों अरु थापेउँ सिव सुख धाम।**
**सीता सहित कृपानिधि संभुहि कीन्ह प्रनाम॥**

'मैंने यहाँ पुल बाँधा (बँधवाया) और सुखधाम श्री शिवजी की स्थापना की।' तदनन्तर कृपानिधान श्री राम जी ने सीता जी सहित श्री रामेश्वर महादेव को प्रणाम किया।

**जहँ जहँ कृपासिंधु बन कीन्ह बास बिश्राम।**
**सकल देखाए जानकिहि कहे सबन्हि के नाम॥**

वन में जहाँ तहाँ करुणा सागर श्री रामचंद्रजी ने निवास और विश्राम किया था, वे सब स्थान प्रभु ने जानकी जी को दिखलाए और सबके नाम बतलाए।

**तुरत बिमान तहाँ चलि आवा। दंडक बन जहँ परम सुहावा॥**
**कुंभजादि मुनिनायक नाना। गए रामु सब कें अस्थाना॥**

विमान शीघ्र ही वहाँ चला आया, जहाँ परम सुंदर दण्डकवन था और जहां अगस्त्य आदि बहुत से मुनिराज रहते थे। श्री रामजी इन सबके स्थानों में गए।

**सकल रिषिन्ह सन पाइ असीसा। चित्रकूट आए जगदीसा॥**
**तहँ करि मुनिन्ह केर संतोषा। चला बिमानु तहाँ ते चोखा॥**

संपूर्ण ऋषियों से आशीर्वाद पाकर जगदीश्वर श्री राम जी चित्रकूट आए। वहाँ मुनियों को संतुष्ट किया। (फिर) विमान वहाँ से आगे तेजी के साथ चला।

**बहुरि राम जानकिहि देखाई। जमुना कलि मल हरनि सुहाई॥**
**पुनि देखी सुरसरी पुनीता। राम कहा प्रनाम करु सीता॥**

फिर श्री राम जी ने जानकी जी को कलियुग के पापों का हरण करने वाली सुहावनी यमुना जी के दर्शन कराए। फिर पवित्र गंगा जी के दर्शन किए। श्री रामजी ने कहा, 'हे सीते, इन्हें प्रणाम करो।'

**तीरथपति पुनि देखु प्रयागा। निरखत जन्म कोटि अघ भागा॥**
**देखु परम पावनि पुनि बेनी। हरनि सोक हरि लोक निसेनी॥**
**पुनि देखु अवधपुरि अति पावनि। त्रिबिध ताप भव रोग नसावनि॥**

'फिर तीर्थराज प्रयाग को देखो, जिसके दर्शन से ही करोड़ों जन्मों के पाप भाग जाते हैं। फिर परम पवित्र त्रिवेणीजी के दर्शन करो, जो शोकों को हरने वाली और श्री हरि के परम धाम (पहुँचने) के लिए सीढ़ी के समान है। फिर अत्यंत पवित्र अयोध्यापुरी के दर्शन करो, जो तीनों प्रकार के तापों और भव (आवागमन रूपी) रोग का नाश करने वाली है।'

**सीता सहित अवध कहुँ कीन्ह कृपाल प्रनाम।**
**सजल नयन तन पुलकित पुनि पुनि हरषित राम॥**

इस प्रकार कहकर कृपालु श्री राम जी ने सीता जी सहित अवधपुरी को प्रणाम किया। सजल नेत्र और पुलकित शरीर होकर श्री राम जी बार बार हर्षित हो रहे हैं।

**पुनि प्रभु आइ त्रिबेनीं हरषित मज्जनु कीन्ह।**
**कपिन्ह सहित बिप्रन्ह कहुँ दान बिबिध बिधि दीन्ह॥**

फिर त्रिवेणी में आकर प्रभु ने हर्षित होकर स्नान किया और वानरों सहित ब्राह्मणों को अनेकों प्रकार के दान दिए।

**प्रभु हनुमंतहि कहा बुझाई। धरि बटु रूप अवधपुर जाई॥**
**भरतहि कुसल हमारि सुनाएहु। समाचार लै तुम्ह चलि आएहु॥**

तदनन्तर प्रभु ने हनुमान् जी को समझाकर कहा, 'हे हनुमान, तुम ब्रह्मचारी का रूप धरकर अवधपुरी को जाओ। भरत को हमारी कुशल सुनाना और उनका समाचार लेकर चले आना।'

**तुरत पवनसुत गवनत भयऊ। तब प्रभु भरद्वाज पहिं गयऊ॥**
**नाना बिधि मुनि पूजा कीन्ही। अस्तुति करि पुनि आसिष दीन्ही॥**

पवनपुत्र हनुमान्‌जी तुरंत ही चल दिए। तब प्रभु भरद्वाज जी के पास गए। मुनि ने (इष्ट बुद्धि से) उनकी अनेकों प्रकार से पूजा की और स्तुति की और फिर (लीला की दृष्टि से) आशीर्वाद दिया।

**मुनि पद बंदि जुगल कर जोरी। चढ़ि बिमान प्रभु चले बहोरी॥**
**इहाँ निषाद सुना प्रभु आए। नाव नाव कहँ लोग बोलाए॥**

दोनों हाथ जोड़कर तथा मुनि के चरणों की वंदना करके प्रभु विमान पर चढ़कर फिर (आगे) चले। यहाँ जब निषादराज ने सुना कि प्रभु आ गए, तब उसने 'नाव कहाँ है? नाव कहाँ है?' पुकारते हुए लोगों को बुलाया।

**सुरसरि नाघि जान तब आयो। उतरेउ तट प्रभु आयसु पायो॥**
**तब सीताँ पूजी सुरसरी। बहु प्रकार पुनि चरनन्हि परी॥**

इतने में ही विमान गंगाजी को लाँघकर (इस पार) आ गया और प्रभु की आज्ञा पाकर वह किनारे पर उतरा। तब सीताजी बहुत प्रकार से गंगा जी की पूजा करके फिर उनके चरणों पर गिरीं।

**दीन्हि असीस हरषि मन गंगा। सुंदरि तव अहिवात अभंगा॥**
**सुनत गुहा धायउ प्रेमाकुल। आयउ निकट परम सुख संकुल॥**

गंगा जी ने मन में हर्षित होकर आशीर्वाद दिया, 'हे सुंदरी, तुम्हारा सुहाग अखंड हो। भगवान् के तट पर उतरने की बात सुनते ही निषादराज गुह प्रेम में विह्वल होकर दौड़ा। परम सुख से परिपूर्ण होकर वह प्रभु के समीप आया।

**प्रभुहि सहित बिलोकि बैदेही। परेउ अवनि तन सुधि नहिं तेही॥**
**प्रीति परम बिलोकि रघुराई। हरषि उठाइ लियो उर लाई॥**

श्री जानकी जी सहित प्रभु को देखकर वह (आनंद-समाधि में मग्न होकर) पृथ्वी पर गिर पड़ा, उसे शरीर की सुधि न रही। श्री रघुनाथ जी ने उसका परम प्रेम देखकर उसे उठाकर हर्ष के साथ हृदय से लगा लिया।

उसी समय प्रभु ने एक विशेष समुदाय के लोगों का समूह देखा जिनका मुखिया करबद्ध प्रभु की ओर टकटकी लगाए नैनों से अश्रु बहा रहा था। प्रभु ने उसे तुरंत पहचान लिया। यह तो अवध के हिज़ड़ा समुदाय के मुखिया श्री लक्ष्मी नारायण दासी हैं। प्रभु श्री राम तुरंत उनके पास दौड़ते हुए गए। श्री लक्ष्मी नारायण दासी जी प्रभु के चरण पर गिर पड़े और अपने अश्रुओं से उन्होंने प्रभु के धूल भरे चरणों को धो दिया। तब प्रभु ने उन्हें उठाकर अपने गले से लगाया और प्रेम भरे वचन बोले, 'हे काकी, आपको तो अवध में होना था। हमारे स्वागत के लिए इतना दूर आने की आवश्यकता क्या थी? थोड़ी ही देर में तो हम स्वयं ही अवध पहुंचने वाले हैं।'

तब अश्रु भरे नैनों से सुश्री लक्ष्मी नारायण दासी जी बोलीं, 'हे प्रभु, हम तो चौदह वर्ष से अवध गए ही नहीं। भरत मिलाप के पश्चात जब आप वन को चले गए तब से ही हम यहीं आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।'

प्रभु ने विस्मय होकर कहा, 'काकी, मैंने तो आप सब से अवध लौटने की प्रार्थना की थी, फिर आप और आपका समुदाय क्यों नहीं चला गया?'

'हे प्रभु, आपने समस्त नर नारीओं को सम्बोधित करते हुए उन्हें अवध लौटने की आज्ञा दी थी। हम हिजड़ों के लिए तो कोई आदेश नहीं था। अतः प्रभु की इच्छा जान, हम अवध न जाकर यहीं आपकी प्रतीक्षा करते रहे। अब आप आज्ञा दें तो हम अवध को प्रस्थान करें,' बोलीं सुश्री लक्ष्मी नारायण दासी जी।

इस समुदाय का त्याग देख प्रभु के नेत्र जल से भर गए। एक बार फिर उन्होंने सुश्री लक्ष्मी नारायण दासी जी को हृदय से लगाया और कर उठा सभी समाज को सम्बोधित किया, 'हिजड़ा समुदाय मुझे भाई भरत से भी अधिक प्रिय है।

किसी भी मंगल कार्य में सर्व प्रथम इनकी आराधना कर जो भी कार्य किया जाएगा, मैं उसको पूर्णतः सफल बनाऊंगा, ऐसा मेरा शुभाशीष है।'

उसी समय से हर मंगल कार्य, चाहे वह पुत्र-पुत्री जन्म हो, विवाह हो, गृह प्रवेश हो अथवा कोई भी सुमंगल कार्य हो, हिजड़ा समाज का आदर करने के पश्चात ही वह शुभ कार्य किया जाता है।

प्रभु श्री राम ने तद्पश्चात सभी हिजड़ा समुदाय को अयोध्या वापस जाने का आदेश दिया, और सुश्री लक्ष्मी नारायण दासी को अपने साथ ले लिया।

हनुमान जी शीघ्र ही भरत जी से अवध में मिलकर एवं उनको श्री रघुनाथ जी के अवध वापस लौटने का समाचार सुना वापस गंगा तट आ गए जहाँ कृपानिधान श्री राम अपने सभी सखाओं के साथ विश्राम कर रहे थे। हनुमान जी के मुख से सब समाचार सुन प्रभु ने समस्त सखाओं के साथ तुरंत पुष्पक विमान अयोध्या की ओर ले चलने का आदेश दिया।

शीघ्र ही प्रभु समस्त सखाओं के साथ अयोध्या पहुँच गए। अयोध्या पहुँच प्रभु श्री राम ने पुष्पक विमान को पृथ्वी पर उतारा।

कृपा सागर भगवान् श्री रामचंद्रजी ने सब लोगों को आते देखा, तो प्रभु ने विमान को नगर के समीप उतरने की प्रेरणा की। तब वह पृथ्वी पर उतरा।

**उतरि कहेउ प्रभु पुष्पकहि तुम्ह कुबेर पहिं जाहु।**
**प्रेरित राम चलेउ सो हरषु बिरहु अति ताहु॥**

विमान से उतरकर प्रभु ने पुष्पक विमान से कहा कि तुम अब कुबेर के पास जाओ। श्री रामचंद्रजी की प्रेरणा से वह चला, उसे (अपने स्वामी के पास जाने का) हर्ष है और प्रभु श्री रामचंद्रजी से अलग होने का अत्यंत दुःख भी।

**आए भरत संग सब लोगा। कृस तन श्री रघुबीर बियोगा॥**
**बामदेव बसिष्ट मुनिनायक। देखे प्रभु महि धरि धनु सायक॥**

भरतजी के साथ सब लोग आए। श्री रघुवीर के वियोग से सबके शरीर दुबले हो रहे हैं। प्रभु ने वामदेव, वशिष्ठ आदि मुनिश्रेष्ठों को देखा, तो उन्होंने धनुष-बाण पृथ्वी पर रखकर,

**धाइ धरे गुर चरन सरोरुह। अनुज सहित अति पुलक तनोरुह॥**
**भेंटि कुसल बूझी मुनिराया। हमरें कुसल तुम्हारिहिं दाया॥**

छोटे भाई लक्ष्मण जी सहित दौड़कर गुरु जी के चरणकमल पकड़ लिए, उनके रोम रोम अत्यंत पुलकित हो रहे हैं। मुनिराज वशिष्ठ जी ने (उठाकर) उन्हें गले लगाकर कुशल पूछी। (प्रभु ने कहा) आप ही की दया में हमारी कुशल है।

**सकल द्विजन्ह मिलि नायउ माथा। धर्म धुरंधर रघुकुलनाथा॥**
**गहे भरत पुनि प्रभु पद पंकज। नमत जिन्हहि सुर मुनि संकर अज॥**

धर्म की धुरी धारण करने वाले रघुकुल के स्वामी श्री राम जी ने सब ब्राह्मणों से मिलकर उन्हें मस्तक नवाया। फिर भरत जी ने प्रभु के वे चरणकमल पकड़े जिन्हें देवता, मुनि, शंकरजी और ब्रह्माजी (भी) नमस्कार करते हैं।

अपने दोनों ही भ्राता भरत एवं शत्रुघ्न से श्री राम, सीता जी एवं लक्ष्मण जी बड़े प्रेम से मिले।

**प्रभु बिलोकि हरषे पुरबासी। जनित बियोग बिपति सब नासी॥**
**प्रेमातुर सब लोग निहारी। कौतुक कीन्ह कृपाल खरारी॥**

प्रभु को देखकर अयोध्यावासी सब हर्षित हुए। वियोग से उत्पन्न सब दुःख नष्ट हो गए। सब लोगों को प्रेम विह्वल (और मिलने के लिए अत्यंत आतुर) देखकर खर के शत्रु कृपालु श्री राम जी ने एक चमत्कार किया।

**अमित रूप प्रगटे तेहि काला। जथाजोग मिले सबहि कृपाला॥**
**कृपादृष्टि रघुबीर बिलोकी। किए सकल नर नारि बिसोकी॥**

उसी समय कृपालु श्री राम जी असंख्य रूपों में प्रकट हो गए और सबसे (एक ही साथ) यथायोग्य मिले। श्री रघुवीर ने कृपा की दृष्टि से देखकर सब नर-नारियों को शोक से रहित कर दिया।

**छन महिं सबहि मिले भगवाना। उमा मरम यह काहुँ न जाना॥**
**एहि बिधि सबहि सुखी करि रामा। आगें चले सील गुन धामा॥**

भगवान् क्षण मात्र में सबसे मिल लिए। (शिव शंकर भगवान् कहते हैं) हे उमा, यह रहस्य किसी ने नहीं जाना। इस प्रकार शील और गुणों के धाम श्री राम जी सबको सुखी करके आगे बढ़े।

**कौसल्यादि मातु सब धाई। निरखि बच्छ जनु धेनु लवाई॥**

कौसल्या आदि माताएँ ऐसे दौड़ीं मानों नई ब्यायी हुई गायें अपने बछड़ों को देखकर दौड़ी हों।

तब सभी माताओं से प्रभु चरण स्पर्श कर मिले। विशेषकर माता कैकई से बार बार मिले और अपने अवतार को फलित होने का कारण जान उनका अत्यंत आदर किया।

**सुमन बृष्टि नभ संकुल भवन चले सुखकंद।**
**चढ़ी अटारिन्ह देखहिं नगर नारि नर बृंद॥**

तद्पश्चात आनन्दकन्द श्री रामजी अपने महल को चले। आकाश फूलों की वृष्टि से छा गया। नगर के स्त्री, पुरुषों के समूह अटारियों पर चढ़कर उनके दर्शन कर रहे हैं।

**कंचन कलस बिचित्र सँवारे। सबहिं धरे सजि निज निज द्वारे॥**
**बंदनवार पताका केतू। सबन्हि बनाए मंगल हेतू॥**

सोने के कलशों को विचित्र रीति से (मणि-रत्नादि से) अलंकृत कर और सजाकर सब लोगों ने अपने अपने दरवाजों पर रख लिया। सब लोगों ने मंगल के लिए बंदनवार, ध्वजा और पताकाएँ लगाईं।

**बीथीं सकल सुगंध सिंचाई। गजमनि रचि बहु चौक पुराईं।**
**नाना भाँति सुमंगल साजे। हरषि नगर निसान बहु बाजे॥**

सारी गलियाँ सुगंधित द्रवों से सिंचाई गईं। गजमुक्ताओं से रचकर बहुत सी चौकें पुराई गईं। अनेकों प्रकार के सुंदर मंगल साज सजाए गए और हर्षपूर्वक नगर में बहुत से डंके बजने लगे।

**कृपासिंधु जब मंदिर गए। पुर नर नारि सुखी सब भए॥**
**गुर बसिष्ट द्विज लिए बुलाई। आजु सुघरी सुदिन समुदाई॥**

कृपा के समुद्र श्री रामजी जब अपने महल को गए, तब नगर के स्त्री-पुरुष सब सुखी हुए। गुरु वशिष्ठजी ने ब्राह्मणों को बुला लिया और कहा आज शुभ घड़ी, सुंदर दिन आदि सभी शुभ योग हैं।

**सब द्विज देहु हरषि अनुसासन। रामचंद्र बैठहिं सिंघासन॥**
**मुनि बसिष्ट के बचन सुहाए। सुनत सकल बिप्रन्ह अति भाए॥**

आप सब ब्राह्मण हर्षित होकर आज्ञा दीजिए, जिसमें श्री रामचंद्र जी सिंहासन पर विराजमान हों। वशिष्ठ मुनि के सुहावने वचन सब ब्राह्मणों को बहुत ही अच्छे लगे।

**कहहिं बचन मृदु बिप्र अनेका। जग अभिराम राम अभिषेका॥**
**अब मुनिबर बिलंब नहिं कीजै। महाराज कहँ तिलक करीजै॥**

वे सब अनेकों ब्राह्मण कोमल वचन कहने लगे कि श्री राम जी का राज्याभिषेक संपूर्ण जगत को आनंद देने वाला है। हे मुनिश्रेष्ठ, अब विलंब न कीजिए और महाराज का तिलक शीघ्र कीजिए।

**तब मुनि कहेउ सुमंत्र सन सुनत चलेउ हरषाइ।**
**रथ अनेक बहु बाजि गज तुरत सँवारे जाइ॥**

तब मुनि ने सुमन्त्रजी से कहा, वे सुनते ही हर्षित होकर चले। उन्होंने तुरंत ही जाकर अनेकों रथ, घोड़े और हाथी सजाए।

**जहँ तहँ धावन पठइ पुनि मंगल द्रब्य मगाइ।**
**हरष समेत बसिष्ट पद पुनि सिरु नायउ आइ॥**

जहाँ-तहाँ (सूचना देने वाले) दूतों को भेजकर मांगलिक वस्तुएँ मँगाकर फिर हर्ष के साथ आकर वशिष्ठ जी के चरणों में सिर नवाया।

महर्षि वशिष्ठ ने तब श्री राम के राज्याभिषेक की आज्ञा दी ।

**प्रभु बिलोकि मुनि मन अनुरागा। तुरत दिब्य सिंघासन मागा॥**
**रबि सम तेज सो बरनि न जाई। बैठे राम द्विजन्ह सिरु नाई॥**

प्रभु को देखकर मुनि वशिष्ठ जी के मन में प्रेम भर आया। उन्होंने तुरंत ही दिव्य सिंहासन मँगवाया, जिसका तेज सूर्य के समान था। उसका सौंदर्य वर्णन नहीं किया जा सकता। ब्राह्मणों को सिर नवाकर श्री रामचंद्र जी उस पर विराज गए।

**जनकसुता समेत रघुराई। पेखि प्रहरषे मुनि समुदाई॥**
**बेद मंत्र तब द्विजन्ह उचारे। नभ सुर मुनि जय जयति पुकारे॥**

श्री जानकी जी के सहित रघुनाथजी को देखकर मुनियों का समुदाय अत्यंत ही हर्षित हुआ। तब ब्राह्मणों ने वेदमंत्रों का उच्चारण किया। आकाश में देवता और मुनि 'जय, हो, जय हो' ऐसी पुकार करने लगे।

**प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा। पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा॥**
**सुत बिलोकि हरषीं महतारी। बार बार आरती उतारी॥**

(सबसे) पहले मुनि वशिष्ठ जी ने तिलक किया। फिर उन्होंने सब ब्राह्मणों को (तिलक करने की) आज्ञा दी। पुत्र को राजसिंहासन पर देखकर माताएँ हर्षित हुईं और उन्होंने बार-बार आरती उतारी।

**बिप्रन्ह दान बिबिधि बिधि दीन्हे। जाचक सकल अजाचक कीन्हे॥**
**सिंघासन पर त्रिभुअन साईं। देखि सुरन्ह दुंदुभीं बजाईं॥**

उन्होंने ब्राह्मणों को अनेकों प्रकार के दान दिए और संपूर्ण याचकों को अयाचक बना दिया (मालामाल कर दिया)। त्रिभुवन के स्वामी श्री रामचंद्र जी को (अयोध्या के) सिंहासन पर (विराजित) देखकर देवताओं ने नगाड़े बजाए। इस प्रकार प्रभु श्री राम अवध के सम्राट बने। यह कार्तिक अमावस्या का दिवस था, अतः श्री राम भक्त इस दिवस को दीपावली के रूप में मनाते हैं।

# नरकासुर वध

भगवान् श्री राम के लंकाधिपति रावण से युद्ध पर रावण के शौर्य रूपी पसीने की कुछ बूँदें भूमि पर पड़ गई थीं। उन्हीं पसीने की बूंदों से भूमि से एक आकृति का प्रकाट्य हुआ। चूँकि इस आकृति का प्राकट्य भूमि से हुआ था, श्री राम ने उसे अपने पत्नी सीता (भूमिजा) का भाई मान, उस बच्चे को आश्रय दिया और अपने साथ अयोध्या ले आए। श्री राम के राज्याभिषेक के पश्चात जब सम्राट जनक उनसे मिलने अयोध्या पहुंचे तब श्री राम ने उस बच्चे को सीता के भाई के रूप में परिचय करा उन्हें सौंप दिया। माता भूमि एवं असुर रावण के पसीने से उत्पत्ति होने के कारण इस बच्चे का नामकरण हुआ भौमासुर (भूमि से उत्पन्न असुर)। सम्राट जनक ने भौमासुर का १६ वर्ष तक लालन पालन किया, उसके बाद भूमि देवी अपने पुत्र को उनसे आकर ले गईं।

माँ पृथ्वी के आदेश पर इस बच्चे ने सहस्त्रों वर्ष तक भगवान् विष्णु की स्तुति की। उसकी तपस्या से प्रसन्न हो भगवान् विष्णु उसके सामने प्रगट हुए, और उसे आशीर्वाद देते हुए उसे प्राग्ज्योतिषपुर का सम्राट बना उसका राज्याभिषेक कर दिया।

प्राग्ज्योतिषपुर आज के असम की प्राचीन राजधानी थी, जो गुवाहाटी के निकट बसी हुई थी। प्राग्ज्योतिषपुर को श्री राम के पौत्र, सम्राट कुश के पुत्र अमूर्तराज ने बसाया था। लेकिन कुछ पीढ़ीओं के पश्चात् सम्राट कुश के वंसज कुशीनगर में आ गए और यह राज्य सम्राट विहीन था। भौमासुर सीता का भाई अतः कुश का मामा था, अतः भगवान् विष्णु ने उसे इसी वंश से सम्बंधित होने के कारण उसे वहां का राज्य सौंप दिया। भगवान् विष्णु ने उसका विवाह विदर्भ

की राजकुमारी माया से करा दिया, और विवाह में उपहार स्वरुप एक दुर्भेथ रथ भी दिया।

भगवान् विष्णु का आभार मान प्रारम्भ में तो वह उनका भक्त बन धर्मपूर्वक अपना राज्य करता रहा, लेकिन समय के साथ, चूँकि आखिर उसकी उत्पत्ति हुई तो रावण के पसीने से ही थी, वह अभिमानी बन गया और उसके हृदय में अजेय एवं अमर बनने की भावना जाग्रत हो गई। अजेय एवं अमरता प्राप्त करने के लिए उसने माता कामाख्या की घोर तपस्या की।

उसने माता कामाख्या मंदिर का एक प्रकार से पुनर्निर्माण अपनी राजधानी से कुछ किलोमीटर दूरी पर किया। प्राचीन काल सतयुग से ही माता कामाख्या तंत्र सिद्धि की स्वामिन के रूप में मानी जाती रहीं हैं। माँ कामाख्या की मंत्र एवं योग साधना से उसने घोर तपस्या की। कहते हैं मन्त्र, "या देवी सर्व भूतेषू मातृ रूपेण संस्थिता, नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः' के जाप से ही उसने माँ कामाख्या की सिद्धि प्राप्त की।

अभिमानी असुर भौमासुर ने माँ कामाख्या की तपस्या से सिद्धि प्राप्त कर एक प्रकार से अजेय और अमरता का वरदान प्राप्त कर लिया। उसने नर्क लोक पर चढ़ाई कर दी और विजय प्राप्त कर वहां का भी सम्राट बन बैठा, जिससे उसे नरकासुर भी कहा जाने लगा।

लेकिन अब उस पापी का हृदय तो देखो। जिस माँ ने उसे अजेय और अमरता का वरदान प्रदान किया, उसी माँ को अपनी पत्नी बनाने का स्वप्न देखने लगा।

घमंड में चूर असुरराज नरकासुर एक दिन मां भगवती कामाख्या को समक्ष प्रगट होने का आदेश देने लगा। तंत्र मन्त्र की सिद्धि होने से उनके उच्चारण से उसने माँ कामाख्या को अपने समक्ष प्रगट होने को विवश कर दिया। जब माँ प्रगट हुईं तो उन्हें पत्नी बनने का दुराग्रह कर बैठा। कामाख्या महामाया ने नरकासुर की मृत्यु को निकट मानकर उससे कहा कि यदि तुम इसी रात में

नील पर्वत पर चारों तरफ पत्थरों के चार सोपान पथों का निर्माण कर दो एवं कामाख्या मंदिर के साथ एक विश्राम गृह बनवा दो, तो मैं तुम्हारी इच्छानुसार पत्नी बन जाऊँगी और यदि तुम ऐसा न कर पाये तो तुम्हारी मौत निश्चित है। गर्व में चूर असुर ने पथों के चारों सोपान प्रभात होने से पूर्व पूर्ण कर दिये और विश्राम कक्ष का निर्माण कर ही रहा था कि महामाया के एक मायावी कुक्कुट (मुर्गे) द्वारा रात्रि समाप्ति की सूचना दी गयी। इससे नरकासुर ने क्रोधित होकर मुर्गे का पीछा किया और ब्रह्मपुत्र के दूसरे छोर पर जाकर उसका वध कर डाला। यह स्थान आज भी `कुक्टाचकि' के नाम से विख्यात है। लेकिन इससे समय की अवधि पूर्ण हो गई और वह माँ कामाख्या की शर्त पूरा करने में असमर्थ रहा। अतः माँ कामाख्या उससे क्रोधित होकर उसे शीघ्र नारी द्वारा मृत्यु का श्राप देकर अंतर्ध्यान हो गईं।

यहां इस का विशेष ध्यान देने की आवश्यकता हैं कि माँ ने उसे नारी द्वारा मृत्यु का श्राप क्यों दिया। एक तो उसने माँ रूपेण नारी का अपमान किया, दूसरा उसने माँ से ही किसी भी पुरुष, देवता आदि के हाथों न मरने का वरदान ले लिया था। वह स्वप्न में भी अपनी मृत्यु नारी के हाथों से सोच भी नहीं सकता था, क्योंकि नारी तो उसकी दृष्टि में अबला थी।

इसी मध्य उसकी मित्रता असुर वाणासुर से हो गई। वाणासुर की संगति में वह एक दुराचारी सम्राट बन गया। उसने अपनी शक्ति से इंद्र, वरुण, अग्नि, वायु आदि सभी देवताओं को पराजित कर दिया। वह साधू संतों को त्रास देने लगा। महिलाओं पर अत्याचार करने लगा। उसने १६ सहस्त्र स्त्रीयों को बंदी बना अपने अन्तः पुर में डाल दिया। जब उसका अत्याचार बहुत बढ़ गया तो देवता व ऋषिमुनि भगवान श्री कृष्ण की शरण में गए। भगवान श्री कृष्ण ने उन्हें नराकासुर से मुक्ति दिलाने का आश्वसान दिया। नरकासुर को स्त्री के हाथों मरने का श्राप था इसलिए भगवान श्रीकृष्ण ने अपनी पत्नी सत्यभामा को अपना सारथी बना युद्ध में सम्मलित कर उन्हीं की सहायता से कार्तिक मास के कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को नरकासुर का वध कर देवताओं व संतों को उसके आतंक से मुक्ति दिलाई तथा बंदी गृह से सोलह हजार युवतियों को

मुक्त करवाया। युवतियां मुक्त तो हो गयीं पर भौमासुर के यहां इतने दिन रहने के कारण सामाजिक विरोधों और मान्यताओं के चलते इन को कोई भी अपनाने को तैयार नहीं था, तब अंत में श्रीकृष्ण ने सभी को आश्रय दिया। उन सभी कन्याओं ने श्रीकृष्ण को पति रूप में स्वीकार किया। श्री कृष्ण उन सब को अपने साथ द्वारिकापुरी ले आए, जहां वे सभी कन्याएं स्वतंत्रता पूर्वक अपनी इच्छानुसार सम्मानपूर्वक रहने लगीं।

जब नरकासुर के त्रास से जगत को चैन और शान्ति मिली, उसी की प्रसन्नता में दूसरे दिन अर्थात कार्तिक मास की अमावस्या को लोगों ने अपने घरों में दीप जला उत्सव मनाया। तभी से कृष्ण भक्त कार्तिक चतुर्दशी को नरक चतुर्दशी एवं उसके अगले दिन कार्तिक अमावस्या को नारी मुक्ति दिवस के रूप में दीपावली का उत्सव मनाते हैं।

# शिरडी साईंनाथ का भगवद्प्रेम

यह सर्व विदित है कि १९वीं सदी के मध्य में जन्मे शिरडी साईं बाबा एक धर्मगुरु ही नहीं, बल्कि एक महान समाज सुधारक थे। उनके प्रयास से हिन्दू-मुस्लिम एकता को बल मिला। शिरडी में उनके जीवन काल एवं उनके समाधिस्त होने के पश्चात भी किसी प्रकार की साम्प्रदायिकता का अनुभव कभी किसी ने नहीं किया। उनके होठों पर सदैव 'सब का मालिक ईश्वर एक' रहता था। शिरडी साईं बाबा ने सन १९१८ में दशहरा के दिवस महासमाधि ली। हिंदी तिथि के अनुसार सन २०२१ में दशहरा दिवस १५ अक्टूबर उनकी महासमाधि का दिवस है। उनकी महासमाधि दिवस पर उनको स्मरण करते हुए उनके भगवद प्रेम का यहां चित्रण करने का प्रयास करते हैं।

उनके ईश्वर प्रेम की अनगिनत कहानियां श्री गोविंदराव रघुनाथ दाभोलकर जी द्वारा रचित 'श्री साईं सच्चरित्र' पुस्तक में उपलब्ध हैं।

श्री साईं सच्चरित्र के अध्याय ६ के अनुसार उन्होंने श्री राम नवमी का उत्सव अपने भक्तों के साथ शिरडी में सन १९११ में मनाना प्रारम्भ किया। यह दिन शिरडी के महोत्सव के रूप में परवर्तित हो गया। उनके समाधिस्त होने के १०० वर्षों से भी अधिक के पश्चात आज भी श्री राम नवमी महोत्सव शिरडी एवं समस्त विश्व में उनके भक्तों द्वारा बड़े धूम धाम से मनाया जाता है।

श्री शिरडी साईंनाथ को भगवान् विष्णु से अत्यंत प्रेम था। श्री साईं सच्चरित्र के अध्याय २७ के अनुसार उन्होंने अपने अंतरंग भक्त श्री शामा जी को "श्री विष्णुसहस्त्रनामस्त्रोत्रं" की एक प्रतिलिपि भेंट कर उन पर अत्यंत कृपा की।

श्री शिरडी साईंनाथ के जीवन काल में विद्वान् पुरुष, साधु, सन्यासी, फकीर इत्यादि का उनसे आशीर्वाद लेने आने का तांता लगा रहता था। एक समय एक श्री रामदासी जी (स्वामी समर्थ श्री रामदास जी के भक्त) आकर कुछ दिन शिरडी में ठहरे। वह नित्य नियमानुसार प्रातःकाल उठते और नित्य कर्म के पश्चात् स्नान कर भगवा वस्त्र धारण कर, शरीर पर भस्म लगा, विष्णुसहस्त्रनाम का जाप किया करते थे। वह अध्यात्म रामायण का भी श्रद्धापूर्वक नित्य पाठ किया करते थे। एक दिन श्री साईं बाबा ने श्री शामा जी को भी विष्णुसहस्त्रनाम से परिचित कराने का विचार किया। उन्होंने श्री रामदासी जी को अपने समीप बुलाकर उन्हें किसी कार्यवश बाजार भेज दिया। श्री साईंबाबा की आज्ञा पा तब श्री रामदासी जी ने अपना पाठ स्थगित कर दिया और वह बाजार चले गए। तब श्री साईं बाबा अपने आसन से उठे और जहाँ श्री रामदास जी पाठ कर रहे थे वहां से उनकी पुस्तकों में से श्री विष्णुसहस्त्रनाम की पुस्तिका उठाई और पुनः अपने आसन पर विराजमान होकर श्री शामा जी को अपने समीप बुलाकर उनसे कहने लगे, 'यह पुस्तक अमूल्य और मनोवांछित फल देने वाली है इसलिये मैं तुम्हें इसे प्रदान कर रहा हूँ। तुम इसका नित्य पठन करो। एक बार जब मैं अधिक रुग्ण था (संभवतः श्री शिरडी साईं नाथ श्री शामा जी को किसी अपने पूर्वजन्म की घटना से अवगत करा रहे थे) तो मेरा हृदय अति तीव्रता से धड़कने लगा। ऐसा लग रहा था कि मेरे प्राणपखेरु उड़ना ही चाहते थे। उस समय मैंनें इस सदग्रन्थ को अपने हृदय पर रख लिया। कैसा सुख पहुँचाया इसने? उस समय मुझे ऐसा ही भान हुआ, मानों ईश्वर ने स्वयं ही पृथ्वी पर आकर मेरी रक्षा की। इस कारण यह ग्रन्थ मैं तुम्हें दे रहा हूँ। इसे थोड़ा धीरे धीरे कम से कम एक श्लोक प्रतिदिन अवश्य पढ़ना। इससे तुम्हारा बहुत भला होगा।'

तब श्री शामा जी कहने लगे, 'देवा, मुझे इस ग्रन्थ की आवश्यकता नहीं। आप जानते ही हैं कि इस पुस्तिका के स्वामी श्री रामदासी जी एक पागल, हठी और अतिक्रोधी व्यक्ति हैं। वह व्यर्थ ही मुझ से अभी आकर लड़ने को तैयार हो जाएंगे। इसके अतिरिक्त अल्पशिक्षित होने के कारण मैं संस्कृत भाषा में लिखित इस ग्रन्थ को पढ़ने में भी असमर्थ हूँ।'

श्री शामा जी यह पुस्तिका नहीं लेना चाहते थे, लेकिन श्री साईं बाबा तो 'येन केन प्रकारेण' विष्णुसहस्रनाम उनके कंठ में उतार देना चाहते थे। वे तो अपने एक अल्पशिक्षित अंतरंग भक्त को सांसारिक दुःखों से मुक्त कर देना चाहते थे। ईश्वर नाम के जप का महत्व तो सभी को विदित ही है जो हमें पापों से बचाकर कुवृत्तियों से हमारी रक्षा कर, जन्म तथा मृत्यु के बन्धन से छुड़ा देता है। यह आत्मशुद्धि के लिये एक उत्तम साधन है जिसमें न किसी सामग्री की आवश्यकता है और न किसी नियम बन्धन की। इससे सुगम और प्रभावकारी साधन अन्य कोई नहीं। श्री साईं बाबा की इच्छा तो श्री शामा जी से यह साधना कराने की थी। उनकी अनिच्छा पर श्री साईं बाबा ने उन पर दबाव डाला। ऐसा सुनने में आया है कि बहुत पहले संत श्री एकनाथ महाराज ने भी अपने एक पड़ोसी ब्राह्मण से श्री विष्णुसहस्त्रनाम का जप करने के लिये आग्रह कर उसकी रक्षा की थी। श्री विष्णुसहस्त्रनाम का जप चित्तशुद्धि के लिये एक श्रेष्ठ तथा स्पष्ट मार्ग है। इसलिये श्री साईं बाबा ने श्री शामा जी को अनुरोधपूर्वक इसके जप में प्रवृत्त किया। जब श्री रामदासी जी बाजार से लौटे तो उन्हें उक्त घटना का सम्पूर्ण वृत्तांत प्राप्त हुआ।

श्री रामदासी जी क्रोधावेश में आकर श्री शामा जी की ओर लपके और कहने लगे, 'यह तुम्हारा ही कार्य है जो तुमने श्री साईं बाबा के आदेश द्वारा मुझे बाजार भिजवाया। यदि तुमने पुस्तिका तुरंत नहीं लौटाई तो मैं तुम्हारा सिर तोड़ दूँगा।'

श्री शामा जी ने उन्हें शांतिपूर्वक समझाने का प्रयास किया। परन्तु उनके प्रयास व्यर्थ ही गए। तब श्री साईं बाबा प्रेमपूर्वक श्री रामदासी जी से बोले, 'अरे रामदासी, यह क्या बात हैं? क्यों उपद्रव कर रहे हो? क्या शामा अपना बालक नहीं है? तुम व्यर्थ ही क्यों उससे झगड़ा कर रहे हो? मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि तुम्हारी प्रकृति ही उपद्रवी है। क्या तुम नम्र और मृदुल वाणी नहीं बोल सकते? तुम नित्य प्रति इन पवित्र ग्रन्थों का पाठ किया करते हो, फिर भी तुम्हारा चित्त अशुद्ध ही है। जब तुम्हारी इच्छायें ही तुम्हारे वश में नहीं, तो तुम रामदासी कैसे? तुम्हें तो समस्त वस्तुओं से अनासक्त (वैराग्य)

होना चाहिये। कैसी विचित्र बात है कि तुम्हें इस पुस्तक पर इतना अधिक मोह है। सच्चे रामदासी को तो ममता त्याग कर समदर्शी होना चाहिये। तुम तो अभी बालक शामा से केवल एक छोटी सी पुस्तक के लिये झगड़ा कर रहे हो। जाओ, अपने आसन पर बैठो। पैसों से पुस्तकें तो अनेक प्राप्त हो सकती है, परन्तु मनुष्य नहीं। उत्तम विचारक बनकर विवेकशील हो। पुस्तक का मूल्य ही क्या है, और उससे शामा को क्या प्रयोजन? मैंने स्वयं उठकर वह पुस्तक उसे दी थी। मैंने सोचा कि तुम्हें तो यह पुस्तक पूर्णतः कंठस्थ है। शामा को इसके पठन से कुछ लाभ पहुँचे, इसलिये मैंने उसे दे दी।'

श्री साईं बाबा के ये शब्द कितने मृदु, मार्मिक तथा अमृततुल्य थे। इनका प्रभाव श्री रामदासी जी पर तुरंत पड़ा। वह चुप हो गए। थोड़ी देर में फिर श्री शामा जी से बोले, 'मैं इसके बदले में पंचरत्नी गीता की एक प्रति स्वीकार कर लूँगा।'

तब श्री शामा जी भी प्रसन्न होकर कहने लगे कि एक ही क्यों, मैं तो तुम्हें उसके बदले में १० प्रतियाँ देने को तैयार हूँ।

इस प्रकार यह विवाद तो शान्त हो गया, परन्तु अब प्रश्न यह आया कि श्री रामदासी जी ने पंचरत्नी गीता के लिये इतना आग्रह क्यों किया? श्री रामदासी होने के कारण पंचरत्नी गीता का उनके लिए कोई विशेष महत्व नहीं था। जो व्यक्ति मस्जिद में प्रतिदिन धार्मिक ग्रन्थों का पाठ करता हो, वह साईं बाबा के समक्ष ही इतना उत्पात करने पर क्यों उतारु हो गया? हम नहीं जानते कि इस दोष का निराकरण कैसे करें और किसे दोषी ठहरावें? हम तो केवल इतना ही जान सके कि यदि इस प्रणाली का अनुसरण न किया गया होता तो विषय का महत्व और ईश्वर नाम की महिमा तथा श्री शामा जी को विष्णुसहस्त्रनाम के पठन का शुभ अवसर ही प्राप्त न होता। इससे यही प्रतीत होता है कि श्री साईं बाबा के उपदेश की शैली और उसकी प्रक्रिया अद्वितीय थी। श्री शामा जी ने धीरे धीरे इस ग्रन्थ का इतना अध्ययन कर लिया और उन्हें इस विषय का इतना ज्ञान हो गया कि वह श्रीमान् बूटी साहेब जी के दामाद

प्रोफेसर श्री जी.जी. नारके, एम.ए., (इंजीनियरिंग कालेज, पूना) को भी उसका यथार्थ अर्थ समझाने में पूर्ण सफल हुए।

भगवान् के अनन्य भक्त पितामह श्री भीष्म जी ने धर्मराज युधिष्ठिर जी को कलियुग में अल्प प्रयास से सुख शांति एवं समृद्धि प्राप्त करने का साधन भगवान् विष्णु के सहस्त्र नामों का जपन करना बताया है, जिसको महर्षि भगवान् वेद व्यास जी ने संस्कृत के श्लोकों में लिपिबद्ध किया है। इसके महात्मय एवं जपने से चमत्कारिक शक्तियों द्वारा जन कल्याण कोई नया विषय नहीं है। अनगनित ग्रन्थ एवं ऋषियों ने भी इसके महात्मय के बारे में वर्णन किया है।

आप सभी जानते हैं कि जब कलियुग का आगमन हुआ तो भारतवर्ष में सत्य, धर्म पालनहार, धर्म के अनुयायी एवं न्याय प्रिय सम्राट शिरोमणी परीक्षित जी का शासन था। अब काल का चक्र देखिये। एक घटना ने सब कुछ बदल दिया। महाराज परीक्षित एक दिन आखेट करने निकले। उन्होंने उस दिन स्वर्ण मुकुट धारण किया। उन्होंने स्वयं ही कलियुग को स्वर्ण में निवास करने की अनुमति दे रखी थी। कलियुग उसमें घुस गया, और उसने सम्राट शिरोमणी परीक्षित जी की बुद्धि पलट दी।

आखेट करते हुए सम्राट शिरोमणी परीक्षित जी ने एक हिरन के पीछे अपना घोड़ा लगा दिया। बहुत दूर तक पीछा करने पर भी वह हिरन न मिला। थकावट के कारण उन्हें भूख और प्यास लग रही थी। एक मुनि आश्रम दिखाई दिया। यह एक वृद्ध मुनि महर्षि शमीक जी का आश्रम था। महर्षि ध्यान में मग्न थे। राजा ने ध्यानमग्न महर्षि से जल माँगा। ध्यानमग्न मुनि को सम्राट शिरोमणी परीक्षित जी का स्वर सुनायी ही नहीं दिया। कलि के प्रभाव से राजा की बुद्धि भ्रमित हो चुकी थी। थके और प्यासे सम्राट परीक्षित को मुनि के इस व्यवहार से बड़ा क्रोध हुआ। कलि के प्रभाव से सम्राट परीक्षित ने सोचा कि मुनि ने घमंड के कारण हमारी बात का उत्तर नही दिया है, और इस अपराध का उन्हें कुछ दंड देना चाहिए। पास ही एक मरा हुआ साँप पड़ा था। सम्राट

परीक्षित ने कमान की नोक से उसे उठाकर मुनि के गले में डाल दिया और अपनी राह ली। मुनि के श्रृंगी नाम के एक महातेजस्वी पुत्र थे। वह स्नान ध्यानादि करने पास की नदी में गए हुए थे। जब आश्रम लौटे तो पिता के गले में मृतक सर्प देख क्रोध में आ गए। कोपशील महर्षि श्रृंगी पिता के इस अपमान को सहन नहीं कर पाए और उन्होंने कमंडल से जल लेकर शाप दिया कि जिस पापात्मा ने मेरे पिता के गले में मृत सर्प की माला पहनाई है, आज से सात दिन के अंदर तक्षक नाम का सर्प उसे डस ले। पिता के ध्यानावस्था से वापस आने पर पुत्र श्रृंगी ने उपर्युक्त उग्र शाप सम्राट शिरोमणी परीक्षित जी को देने की बात कही। महर्षि को पुत्र के अविवेक पर दुःख हुआ और उन्होंने एक शिष्य द्वारा सम्राट परीक्षित को शाप का समाचार कहला भेजा जिसमें वे सतर्क रहें। सम्राट परीक्षित ने ऋषि के शाप को अटल समझकर अपने पुत्र जनमेजय को राजगद्दी पर बिठा दिया, और सब प्रकार से मरने के लिये तैयार होकर अनशन व्रत करते हुए भगवान् महर्षि श्री शुकदेव जी से श्रीमद्भागवत की कथा सुनी। सातवें दिन तक्षक ने आकर उन्हें डस लिया और विष की भयंकर ज्वाला से उनका शरीर भस्म हो गया।

सम्राट परीक्षित की मृत्यु के बाद फिर कलियुग की रोक टोक करने वाला कोई न रहा, और वह उसी दिन से अकंटक भाव से शासन करने लगा।

सम्राट जनमेजय इस प्रकरण से बहुत आहत हुए। उन्होंने सारे सर्पवंश का समूल नाश करने का निश्चय किया। इसी उद्देश्य से उन्होंने सर्प सत्र या सर्प यज्ञ के आयोजन का निश्चय किया। यह यज्ञ इतना भयंकर था कि विश्व के सारे सर्पों का महाविनाश होने लगा। उस समय एक बाल ऋषि अस्तिक उस यज्ञ परिसर में आये। उनकी माता मानसा एक नाग थीं तथा उनके पिता एक ब्राह्मण थे। अस्तिक के आग्रह के कारण जनमेजय ने सर्प सत्र या यज्ञ तो समाप्त कर दिया परन्तु उनसे एक निवेदन किया। कलि के कारण मेरे पिता की बुद्धि भ्रम हुई क्योंकि उन्होंने स्वर्ण मुकुट धारण किया हुआ था। महर्षि कश्यप जो मेरे पिता को बचा सकते थे, लोभ वश कलि द्वारा धन देने पर धन की प्राप्ति कर वापस चले गए। अब सांसारिक व्यक्तियों के पास स्वर्ण भी

होगा ही। लोभ से भी बचना असंभव। अतः कलि से कैसे रक्षा की जा सकती है? तब बाल महर्षि अस्तिक जी ने अपने गुरु एवं भगवान् वेद व्यास जी के परम शिष्य महर्षि वैशम्पायन जी का आवाहन किया। महर्षि वैशम्पायन जी तब वहां पधारे।

महर्षि वैशम्पायन जी ने तब अपने गुरु महर्षि भगवान् वेद व्यास जी रचित 'श्रीविष्णुसहस्त्रनामस्तोत्रम्' का उल्लेख करते हुए वरदान दिया कि जो भी नर नारी 'श्रीविष्णुसहस्त्रनामस्तोत्रम्' का जाप करेंगे उनके गृह में कलि का वास नहीं होगा तथा 'श्रीविष्णुसहस्त्रनामस्तोत्रम्' का पाठ करने वाले व्यक्ति को यश, सुख, ऐश्वर्य, संपन्नता, सफलता, आरोग्य एवं सौभाग्य प्राप्त होगा, तथा मनोकामनाओं की पूर्ति होगी।

**नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्त्र मूर्तये, सहस्त्रपादाक्षि शिरोरु बाहवे।**
**सहस्त्र नाम्ने पुरुषाय शाश्वते, सहस्त्रकोटि युग धारिणे नमः।।**

इस घटना से इस ग्रन्थ की उपयोगिता का श्री साईं बाबा ने हमें दोबारा स्मरण कराया। श्री साईं बाबा का आशीर्वाद आप सबके साथ रहे और आप नियमित रूप से इस ग्रन्थ का अध्ययन कर, सुख, शांति एवं समृद्धि प्राप्त करें, ऐसी हम कामना करते हैं। मूल ग्रन्थ कठिन संस्कृत भाषा में होने के कारण पाठकों को कठिनाई का सामना करना पड़ता है। अतः श्री राम कथा संस्थान ने इसका हिंदी काव्य रूपान्तरण करने का प्रयास किया है। इस हिंदी काव्य के द्वारा मूल ग्रन्थ के भगवान् विष्णु के सहस्त्र नामों को यथाचित रखते हुए हिंदी में भगवान् के नामों का भावार्थ समझाया गया है। कविता रूप में पाठ करने से स्वर उच्चारण पर अति आनंद आता है तथा तरंगों द्वारा भगवान् के प्रति आकर्षण बढ़ता है। यह पुस्तक 'श्री विष्णु स्तुतिः सहस्त्रनाम हिंदी काव्य' निःशुल्क श्री राम कथा संस्थान की वेबसाइट से डाउनलोड की जा सकती है, अथवा श्री संस्थान से संपर्क स्थापित कर केवल डाक व्यय पर इसकी प्रतिलिपि मंगाई जा सकती है।

# श्रीमद्भागवद्गीता - स्वामी श्री रामसुख दास जी के मुख से

**('श्रीमद्भगवद्गीता: साधक संजीवनी' से उद्धृत)**

## पूज्यनीय स्वामी श्री रामसुख दास जी महाराज का संक्षिप जीवन परिचय

स्वामी रामसुखदास जी का जन्म राजस्थान के नागौर जिले के ग्राम माडपुरा में रूघाराम पिडवा के यहाँ सन् १९०४ में हुआ था। उनकी माता कुनणाँबाई के सहोदर भ्राता श्री सदाराम रामस्नेही जी श्री रामानंदी सम्प्रदाय के साधु थे। ४ वर्ष की आयु में ही माताजी ने बालक राम सुखदास को इनके चरणो में भेंट कर दिया। शिक्षा दीक्षा के पश्चात वे विरक्त (संन्यासी) हो गये और उन्होंने गीता के मर्म को साक्षात् किया। अपने प्रवचनों से निरन्तर अमृत वर्षा करने लगे। गीता प्रेस गोरखपुर द्वारा संचालित साहित्य का आप वर्षो तक संचालन करते रहे। आपने सदा परिव्राजक रूप में सदा गाँव गाँव, शहरों में भ्रमण करते हुए श्री गीता जी का ज्ञान जन जन तक पहुँचाया और साधु समाज के लिए एक आदर्श स्थापित किया कि साधु जीवन कैसे त्यागमय, अपरिग्रही, अनिकेत और जल-कमलवत् होना चाहिए और सदा एक एक क्षण का सदुपयोग करके लोगों को अपने में न लगाकर सदा भगवान् में लगाकर, कोई आश्रम, शिष्य न बनाकर और सदा अमानी रहकर, दूसरों को मान देकर, द्रव्य-संग्रह, व्यक्ति पूजा से सदा कोसों दूर रहकर, अपने चित्र की कोई पूजा न करवाकर, लोग भगवान् में लगें, ऐसा आदर्श स्थापित कर, गंगातट, स्वर्गाश्रम, हृषिकेश में आषाढ़ कृष्ण द्वादशी दि. ३.७.२००५ ब्रह्ममुहूर्त में भगवद-धाम पधारे।

आप एक महान् विलक्षण महापुरुष थे। आपने श्री मद्भागवद्गीता पर अद्वितीय हिन्दी टीका लिखी है। इसके अध्ययन से परमात्मा तत्व का बोध होता है। श्री गीता जी का रहस्य समझ में आता है। घर परिवार और संसार में रहने की विद्या आती है। सब दुख, चिन्ता, भय आदि सदा सदा के लिये मिटते हैं और

आनन्द होता है। उनकी श्री गीता पर व्याख्या में लिखी विविध पुस्तकों में से कुछ हैं, "गीता-दर्पण", "गीता-माधुर्य", "साधन सुधा सिन्धु," "श्रीमद्भागवद्गीता साधक संजीवनी" इत्यादि इत्यादि।

उनके अनुसार भगवत्प्राप्ति के लिये न तो कहीं जाने की आवश्यकता है और न वेष बदल कर साधू बनाना आवश्यक है। जिस परमात्मा से सम्पूर्ण प्राणियों की प्रवृत्ति (उत्पत्ति) होती है, और जिससे यह सम्पूर्ण संसार व्याप्त है, उस परमात्मा का अपने कर्म के द्वारा पूजन करके मनुष्य मात्र सिद्धि को प्राप्त हो जाता है। प्रभु का आश्रय लेने वाला भक्त सदा सब कर्म करता हुआ भी प्रभु की कृपा से शाश्वत अविनाशी पद को प्राप्त हो जाता है। जब परमात्मा की प्राप्ति की उत्कट अभिलाषा जाग्रत हो जाय, तभी परमात्मा का अनुभव होने लगता है। 'श्रीमद्भागवद्गीता: साधक संजीवनी' से उद्धृत यहां क्रमशः श्री गीता जी की पूज्यनीय श्री स्वामी जी के मुख से निकली व्याख्या को प्रस्तुत करने का प्रयास किया जा रहा है।

**श्रीमद्भागवद्गीता प्रथम अध्याय**

**धृतराष्ट्र उवाच:**
**धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः ।**
**मामकाः पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत संजय ॥१-१॥**

धृतराष्ट्र बोले- हे सञ्जय ! धर्मभूमि कुरुक्षेत्र में युद्ध की इच्छा से इकट्ठे हुए मेरे और पांडु के पुत्रों ने क्या किया?

**'धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे'**- कुरुक्षेत्र में देवताओं ने यज्ञ किया था। राजा कुरु ने भी यहाँ तपस्या की थी। यज्ञादि धर्ममय कार्य होने से तथा राजा कुरु की तपस्या भूमि होने से इसको धर्मभूमि कुरुक्षेत्र कहा गया है। यहाँ 'धर्मक्षेत्रे' और 'कुरुक्षेत्रे' पदों में 'क्षेत्र' शब्द देने में धृतराष्ट्र का अभिप्राय है कि यह अपनी कुरुवंशियों की भूमि है। यह केवल लड़ाई की भूमि ही नहीं है, प्रत्युत तीर्थ

भूमि भी है, जिसमें प्राणी जीते जी पवित्र कर्म करके अपना कल्याण कर सकते हैं। इस तरह लौकिक और पारलौकिक सब तरह का लाभ हो जाय, ऐसा विचार करके एवं श्रेष्ठ पुरुषों की सम्मति लेकर ही युद्ध के लिए यह भूमि चुनी गयी है। संसार में प्रायः तीन बातों को लेकर लड़ाई होती है, भूमि, धन और स्त्री। इन तीनों में भी राजाओं का आपस में लड़ना मुख्यतः जमीन को लेकर होता है। यहाँ 'कुरुक्षेत्रे' पद देने का तात्पर्य भी जमीन को लेकर लड़ने में है। कुरुवंश में धृतराष्ट्र और पाण्डु के पुत्र सब एक हो जाते हैं। कुरुवंशी होने से दोनों का कुरुक्षेत्र में अर्थात राजा कुरु की जमीन पर समान अधिकार लगता है। इसलिए दोनों जमीन के लिए लड़ाई करने आए हुए हैं। यद्यपि अपनी भूमि होने के कारण दोनों के लिए 'कुरुक्षेत्रे' पद देना युक्तिसंगत, न्यायसंगत है, तथापि हमारी सनातन वैदिक संस्कृति ऐसी विलक्षण है कि कोई भी कार्य करना होता है, तो वह धर्म को सामने रखकर ही होता है। युद्ध जैसा कार्य भी धर्मभूमि, तीर्थभूमि में ही करते हैं, जिससे युद्ध में मरने वालों का उद्धार हो जाय, कल्याण हो जाय। अतः यहाँ कुरुक्षेत्र के साथ 'धर्मक्षेत्रे' पद आया है। यहाँ आरम्भ में 'धर्म' पद से एक और बात भी मालूम होती है। अगर आरम्भ के 'धर्म' पद में से 'धर्' लिया जाए और अठारहवें अध्याय के अंतिम श्लोक के 'मम' पद में से 'म' लिया जाए, तो 'धर्म' शब्द बन जाता है। अतः सम्पूर्ण गीता धर्म के अंतर्गत है, अर्थात धर्म का पालन करने से गीता के सिद्धांतों का पालन हो जाता है और गीता के सिद्धान्तों के अनुसार कर्तव्य-कर्म करने से धर्म का अनुष्ठान हो जाता है। इन 'धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे' पदों से सभी मनुष्यों को यह शिक्षा लेनी चाहिए कि कोई भी कार्य करना हो तो वह धर्म को सामने रखकर ही करना चाहिए। प्रत्येक कार्य सबके हित की दृष्टि से ही करना चाहिए, केवल अपने सुख-आराम की दृष्टि से नहीं, और कर्तव्य-अकर्तव्य के विषय में शास्त्र को सामने रखना चाहिए।

**'समवेता युयुत्सवः'**- राजाओं के द्वारा बार बार सन्धि का प्रस्ताव रखने पर भी दुर्योधन ने सन्धि करना स्वीकार नहीं किया। इतना ही नहीं, भगवान श्री कृष्ण के कहने पर भी दुर्योधन ने स्पष्ट कह दिया कि बिना युद्ध के तीखी सूई की नोक जितनी जमीन भी पांडवों को नहीं देगा। तब विवश होकर पाण्डवों

ने भी युद्ध करना स्वीकार किया। इस प्रकार धृतराष्ट्र पुत्र और पाण्डुपुत्र, दोनों ही सेनाओं के सहित युद्ध की इच्छा से इकट्ठे हुए हैं। दोनों सेनाओं में युद्ध की इच्छा रहने पर भी दुर्योधन में युद्ध की इच्छा विशेष रूप से थी। उसका मुख्य उद्देश्य राज्य प्राप्ति का था। वह राज्य प्राप्ति धर्म से हो चाहे अधर्म से, न्याय से हो चाहे अन्याय से, विहित रीति से हो चाहे निषिद्ध रीति से, किसी भी तरह से राज्य मिलना चाहिये, ऐसा उसका भाव था। इसलिए विशेष रूप से दुर्योधन का पक्ष ही युयुत्सु अर्थात युद्ध की इच्छा वाला था। पाण्डवों में धर्म की मुख्यता थी। उनका ऐसा भाव था कि हम चाहे जैसा जीवन निर्वाह कर लेंगे, पर अपने धर्म में बाधा नहीं आने देंगे, धर्म के विरुद्ध नहीं चलेंगे। इस बात को लेकर महाराज युधिष्ठिर युद्ध नहीं करना चाहते थे। परंतु माँ की आज्ञा होने के कारण ही महाराज युधिष्ठिर की युद्ध में प्रवृत्ति हुई थी अर्थात केवल माँ के आज्ञा पालन रूप धर्म से ही युधिष्ठिर युद्ध की इच्छा वाले हुए हैं। तात्पर्य है कि दुर्योधन आदि तो राज्य को लेकर ही युयुत्सु थे, पर पाण्डव धर्म को लेकर ही युयुत्सु बने थे।

**'मामकाः पाण्डवाश्चैव'-** पाण्डव धृतराष्ट्र को पिता के समान समझते थे और उनकी आज्ञा का पालन करते थे। धृतराष्ट्र द्वारा अनुचित आज्ञा देने पर भी पाण्डव उचित-अनुचित का विचार न करके उनकी आज्ञा का पालन करते थे। अतः यहाँ 'मामकाः' पद के अंतर्गत कौरव और पाण्डव दोनों आ जाते हैं। फिर भी 'पाण्डवाः' पद अलग देने का तात्पर्य है कि धृतराष्ट्र का अपने पुत्रों में तथा पाण्डु पुत्रों में समान भाव नहीं था। उनमें पक्षपात था, अपने पुत्रों के प्रति मोह था। वे दुर्योधन आदि को तो अपना मानते थे, पर पाण्डवों को अपना नहीं मानते थे। इस कारण उन्होंने अपने पुत्रों के लिए 'मामकाः' और पाण्डुपुत्रों के लिए 'पाण्डवाः' पद का प्रयोग किया है, क्योंकि जो भाव अंदर होते हैं, वे ही प्रायः वाणी से बाहर निकलते हैं। इस द्वैधीभाव के कारण ही धृतराष्ट्र को अपने कुल के संहार का दुःख भोगना पड़ा। इससे मनुष्य मात्र को यह शिक्षा लेनी चाहिए कि वह अपने घरों में, मुहल्लों में, गाँवों में, प्रांतों में, देशों में, सम्प्रदायों में द्वैधीभाव अर्थात ये अपने हैं, ये दूसरे हैं, ऐसा भाव न रखे। कारण कि द्वैधीभाव से आपस में प्रेम स्नेह नहीं होता, प्रत्युत कलह होती है। यहाँ

'पाण्डवाः' पद के साथ 'एव' पद देने का तात्पर्य है कि पाण्डव तो बड़े धर्मात्मा हैं, अतः उन्हें युद्ध नहीं करना चाहिये था। परंतु वे भी युद्ध के लिए रणभूमि में आ गए तो वहाँ आकर उन्होंने क्या किया? 'मामकाः' और 'पाण्डवाः' इनमें से पहले 'मामकाः' पद का उत्तर संजय आगे के श्लोक से तेरहवें श्लोक तक देंगे कि आपके पुत्र दुर्योधन ने पाण्डवों की सेना को देखकर द्रोणाचार्य के मन में पाण्डवों के प्रति द्वेष पैदा करने के लिए उनके पास जाकर पाण्डवों के मुख्य मुख्य सेनापतियों के नाम लिये।

उसके बाद दुर्योधन ने अपनी सेना के मुख्य मुख्य योद्धाओं के नाम लेकर उनके रण कौशल आदि की प्रशंसा की। दुर्योधन को प्रसन्न करने के लिए पितामह भीष्म जी ने तीव्रता से शंख बजाया। उसको सुनकर कौरव सेना में शंख आदि बज उठे। फिर चौदहवें श्लोक से उन्नीसवें श्लोक तक 'पाण्डवाः' पद का उत्तर देंगे कि रथ में बैठे हुए पाण्डव पक्षीय भगवान श्रीकृष्ण ने शंख बजाया। उसके बाद अर्जुन, भीम, युधिष्ठिर, नकुल, सहदेव आदि ने अपने अपने शंख बजाये, जिससे दुर्योधन की सेना का हृदय दहल गया। उसके बाद भी संजय पाण्डवों की बात कहते-कहते बीसवें श्लोक से श्रीकृष्ण और अर्जुन के संवाद का प्रसंग आरंभ कर देंगे।

**'किमकुर्वत'-** 'किम्' शब्द के तीन अर्थ होते हैं- विकल्प, निन्दा और प्रश्न। युद्ध हुआ कि नहीं? इस तरह का विकल्प तो यहाँ लिया नहीं जा सकता। 'मेरे और पांडु के पुत्रों ने यह क्या किया, जो कि युद्ध कर बैठे! उनको युद्ध नहीं करना चाहिए था', ऐसी निन्दा या आक्षेप भी यहाँ नहीं लिया जा सकता क्योंकि युद्ध तो चल ही रहा था और धृतराष्ट्र के भीतर भी आक्षेपपूर्वक पूछने का भाव नहीं था। यहाँ 'किम्' शब्द का अर्थ प्रश्न लेना ही ठीक बैठता है। धृतराष्ट्र, संजय से भिन्न-भिन्न प्रकार की छोटी बड़ी सब घटनाओं को अनुक्रम से विस्तार पूर्वक ठीक ठीक जानने के लिए ही प्रश्न कर रहे हैं। सम्बन्ध - धृतराष्ट्र के प्रश्न का उत्तर संजय आगे के श्लोक से देना आरंभ करते हैं।

**क्रमशः - अगले अंक में**

# पढ़ो, समझो और करो - नैतिक कहानी

एक सेठ जी बहुत ही दयालु प्रवृति के थे। वह अत्यंत धार्मिक, कार्मिक एवं आध्यात्मिक पुरुष थे। अगर कोई व्यक्ति अपनी विवशता अथवा आवश्यकतावश उनसे धन उधार माँगने आता, तो कभी मना नहीं करते थे। हाँ, उससे एक प्रश्न अवश्य पूछते थे, 'भाई, तुम उधार कब लौटाओगे? इस जन्म में अथवा अगले जन्म में।'

ईमानदार लोग तो कह उठते, 'सेठ जी, हम तो आपका उधार इसी जन्म में चुकता कर देंगे।' धन उधार लेकर वह ऐसा करते भी थे। समय पर ही सेठ जी का उधार लिया हुआ धन वापस कर देते थे।

लेकिन कुछ चालाक, धोखेबाज़ एवं बेईमान प्रकार के लोग कहते, 'सेठ जी, हम आपका उधार अगले जन्म में वापस करेंगे।' इस प्रकार के लोग अपनी चालाकी और धूर्तता पर मन ही मन बड़े प्रसन्न होते कि क्या मूर्ख सेठ से पाला पड़ा है। अगले जन्म में उधार वापसी की आशा रखता है। अरे, अगला जन्म किसने देखा है?

जो लोग सेठ जी से ऐसा कहते कि अगले जन्म में उधार चुकता करेंगे, सेठ जी बही में ऐसा ही लिखकर उन्हें धन दे देते थे।

एक दिन एक कुटिल प्रवृति का चोर सेठ जी के पास धन उधार लेने पहुंचा। उसका उद्देश्य सेठ जी को मूर्ख बना अगले जन्म में उधार वापस करने की

शपथ के साथ धन उधार लेना एवं सेठ जी की तिजोरी का भी अध्ययन करना था, जिससे वह रात्रि के समय तिजोरी तोड़ धन चुरा सके।

सेठ जी ने उससे प्रायिक प्रश्न पूछा कि भाई तुम उधार इस जन्म में चुकाओगे अथवा अगले जन्म में, और यह जानकर कि वह अगले जन्म में चुकाएगा, बही में लिख दिया और उसे धन दे दिया। चोर ने तिजोरी का अच्छी तरह से अध्ययन भी कर लिया और रात्रि में उसे तोड़ना की योजना बनाने लगा।

वह चोर अन्धेरा होते ही सेठ जी के घर पहुँच उनके भैंसों के तबेले में छिपकर सही समय की प्रतीक्षा करने लगा। अचानक चोर ने सुना कि भैंसें आपस में कुछ बातें कर रहीं थीं। उसने अपने कबीले के गुरु से पशु पक्षिओं की भाषा समझने में माहिरता ले रखी थी।

एक भैंस ने दूसरी से पूछा, 'तुम तो आज ही आई हो न बहन?'

उस भैंस ने उत्तर दिया, 'हाँ बहन, मैं आज ही सेठ के तबेले में आई हूँ। सेठ जी से मैंने पिछले जन्म में यह कहकर धन उधार लिया था कि अगले जन्म में चुकाऊंगी, अतः उनका उधार धन चुकाने आईं हूँ । बहन, तुम यहां कब से रह रही हो?'

पहली वाली भैंस ने तब उत्तर दिया, 'बहन, मैं पिछले तीन वर्षों से सेठ के तबेले में हूँ। मैंने भी पिछले जन्म में सेठ जी से यही कहकर धन उधार लिया था कि अगले जन्म में चुकाऊंगी, अतः चुका रही हूँ। अभाग्य से सेठ से धन उधार लेने के बाद एक दुर्घटना में मेरी मृत्यु हो गई। इस जन्म में मैंने भैंस के रूप में जन्म लिया, और अब चुका रहीं हूँ सेठ जी का उधार। जब तक सेठ जी का उधार पूरा नहीं हो जाता, मुझे पशु बनकर इस जन्म में इसी प्रकार जीवित रहना पड़ेगा। मेरा दुर्भाग्य जो मैं अपनी चालाकी, धूर्तता और कुटिलता में यह साधारण सी बात न समझ पाई।'

दूसरी भैंस फिर बोली, 'बहन, तुम तो मेरी ही कहानी दोहरा रही हो।'

चोर ने जब यह दो भैंसों के बीच वार्तालाप सुना, तो उसके होश उड़ गए। वह समझ गया कि उधार चुकाना ही पड़ेगा, इस जन्म में अथवा अगले जन्म में। वह उलटे पांव वापस लौट गया, और अगले दिन सुबह ही सेठ जी के पास जाकर सभी उधार लिया धन वापस कर दिया।

तो मित्रो, इस कहानी से हमें क्या शिक्षा मिली? श्रुति में लिखा है कि तीन प्रकार के पाप अक्षम्य हैं।

१. किसी की हत्या करना,
२. माता, पिता, गुरु, ब्राह्मण, अथवा वरिष्ठ पुरुष का अपमान करना, एवं
३. धन उधार लेकर वापस न करना। इस श्रेणी में श्रुति ने धोखे से धन हड़पना, धर्म कार्यों के निहित चन्दा लेकर उसे उसी कार्य में न लगाना, इत्यादि को भी सम्मिलित किया है।

# बाल खंड

## मूर्ति पूजा का महत्व: स्वामी विवेकानंद जी के मुख से

प्रिय बच्चो, आपने अपने घर के छोटे से मंदिर में अथवा हिन्दू मंदिरों में हिन्दू देवी देवताओं के चित्रों अथवा उनकी पत्थर की मूर्तियों की पूजा करते हुए अपने माता पिता एवं जन समुदाय को अवश्य देखा होगा। अवश्य ही कभी आपके मन में ऐसी शंका उत्पन्न हुई होगी कि हम इन देवी देवताओं के चित्र अथवा पत्थर की मूर्तियों को क्यों पूजते हैं? आज हम आपको इन देवी देवताओं के चित्रों अथवा पत्थर की मूर्ति की पूजा का महत्व हमारे अति पूज्यनीय स्वामी श्री विवेकानंद जी के मुख से निकले हुए शब्दों से समझाएंगे।

### स्वामी विवेकानंद जी का संक्षिप्त परिचय

जानते हो स्वामी विवेकानंद जी कौन थे? स्वामी विवेकानन्द जी का जन्म १२ जनवरी १८६३ को कोलकता में हुआ था। वह वेदान्त के विख्यात और प्रभावशाली आध्यात्मिक गुरु थे। उनका वास्तविक नाम नरेन्द्र नाथ दत्त था। उन्होंने अमेरिका स्थित शिकागो में सन् १८९३ में आयोजित विश्व धर्म महासभा में भारत की ओर से सनातन धर्म का प्रतिनिधित्व किया था। भारत का आध्यात्मिकता से परिपूर्ण वेदान्त दर्शन अमेरिका और यूरोप के हर एक देश में स्वामी विवेकानन्द की वक्तृता के कारण ही पहुँचा। उन्होंने श्री रामकृष्ण मिशन की स्थापना की थी जो आज विश्व के हर देश में समाज सेवा एवं वैदिक सनातन धर्म को फैलाने का कार्य कर रहा है। वे ठाकुर महाराज श्री रामकृष्ण परमहंस जी के सुयोग्य शिष्य थे। उन्हें इस सभा में बोलने के लिए केवल २ मिनट का समय दिया गया था, लेकिन जब उन्होंने सभा का सम्बोधन "मेरे प्रिय अमेरिकी बहनों एवं

भाइयों" के शब्दों के साथ किया तो दस मिनट तक तो सभा गृह जन समुदाय की तालियों की गूँज से ही गूंजता रहा। वह कई घंटों तक इस सभा में बोले।

सन् १८७१ में आठ साल की आयु में उन्होंने श्री ईश्वर चंद्र विद्यासागर मेट्रोपोलिटन संस्थान में प्रवेश ले प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त की। तद्पश्चात सन १८७९ में कलकत्ता के प्रेसीडेंसी कॉलेज में प्रवेश कर वहां हर विषय में प्रथम श्रेणी प्राप्त करने वाले वह एक मात्र छात्र थे। वे दर्शन, धर्म, इतिहास, सामाजिक विज्ञान, कला और साहित्य सहित विषयों के एक उत्साही पाठक थे। इनकी वेद, उपनिषद, भगवद्गीता, रामायण, महाभारत और पुराणों के अतिरिक्त अनेक हिन्दू शास्त्रों में गहन रूचि थी। उनको भारतीय शास्त्रीय संगीत में भी प्रशिक्षित किया गया था। उन्होंने पश्चिमी तर्क, पश्चिमी दर्शन और यूरोपीय इतिहास का अध्ययन जनरल असेम्बली इंस्टिटूशन (अब स्कॉटिश चर्च कॉलेज) में किया। सन १८८१ में उन्होंने ललित कला की परीक्षा भी उत्तीर्ण की, और सन १८८४ में कला स्नातक की उपाधि प्राप्त की।

उन्होंने डेविड ह्यूम, इमैनुएल कांट, जोहान गोटलिब फिच, बारूक स्पिनोज़ा, जोर्ज डब्लू एच हेजेल, आर्थर स्कूपइन्हार, ऑगस्ट कॉम्टे, जॉन स्टुअर्ट मिल और चार्ल्स डार्विन के साहित्य का गहन अध्ययन किया। स्पेंसर की विश्व प्रसिद्ध पुस्तक 'एजुकेशन' (१८६०) का बंगाली में अनुवाद किया। पश्चिम दार्शनिकों के अध्ययन के साथ ही इन्होंने संस्कृत ग्रंथों और बंगाली साहित्य को भी सीखा। विलियम हेस्टी (महासभा संस्था के प्राचार्य) ने उनके बारे में उस समय लिखा था, 'नरेन्द्र (स्वामी विवेकानंद जी का जन्म नाम) वास्तव में एक अत्यंत प्रतिभाशाली छात्र है। मुझे इस कुशाग्र बुद्धि के छात्र को श्रुतिधर (विलक्षण स्मृति वाला व्यक्ति) नाम से सम्बोधित करते हुए अति हर्ष है।'

ऐसे भारत माँ के महान सपूत स्वामी विवेकानंद जी ने स्वयं अपने मुख से देवी देवताओं की मूर्ति पूजा का महत्व समझाया।

## मूर्ति पूजा का महत्व

अलवर के महाराजा ने एक बार धार्मिक गोष्ठी का आयोजन किया। उसमें स्वामी विवेकानन्द जी भी आमंत्रित थे। सभा में स्वामी विवेकानंद जी ईश्वर के महत्व पर चर्चा कर ही रहे थे कि प्रवचन के मध्य में ही अलवर नरेश अपने सिंहासन से बोले, 'स्वामी जी, आप किस प्रभु की बातें कर रहे हैं? प्रभु तो आप जैसे लोगों ने मन्दिर में पत्थर की मूर्तियों के रूप में जन समाज को भ्रमित करने के लिए अपने स्वार्थ हेतु स्थापित किया हुआ है। इन पत्थर की मूर्तियों का क्या सम्मान? यह आपको दे ही क्या सकती हैं?

स्वामी जी को तब लगा कि अलवर नरेश हिन्दू देवी देवताओं की मूर्ति का सम्मान एवं उनकी पूजा में विश्वास नहीं करते। स्वामी जी अपने प्रवचन को कुछ क्षण रोक कर उस समय तो इतना ही बोले, 'हे राजन, अभी तो आप मेरे शब्द सुनिए। मैं उचित समय पर आपके इस प्रश्न का उत्तर भी दूंगा।'

उस दिन की गोष्ठी समाप्त होने पर अलवर नरेश ने सांय के भोज के लिए स्वामी विवेकानंद जी को अपने महल में आमंत्रित किया। स्वामी जी यथा समय अलवर नरेश के महल में पहुंचे। उन्हें सम्मान सहित स्वयं अलवर नरेश ने भोज कक्ष में भोजन पटल पर अपने दांईं ओर बिठाया। अभी सेवक भोजन परोस ही रहे थे कि एक सेवक को स्वामी जी ने अपनी ओर आने का इशारा किया। सेवक करबद्ध तुरंत ही स्वामी जी के पास उपस्थित हुआ। उस भोज कक्ष में महाराज के दिवंगत पिताश्री का एक चित्र टंगा था। स्वामी जी ने उस सेवक को वह चित्र उतार कर पटल पर रखने को कहा । सेवक और अलवर नरेश दोनों ने ही ऐसा समझा कि स्वामी जी उनके पिताश्री को आशीर्वाद देने हेतु चित्र पटल पर मंगा रहे हैं। सेवक तुरंत चित्र को उतार लाया और स्वामी जी के समक्ष पटल पर रख दिया ।

जैसे ही सेवक ने चित्र को पटल पर रखा, स्वामी जी ने आदेश दिया, 'प्रिय सेवक, अपना जूता उतारो, और एक जूता इस चित्र को मारो।'

सेवक को काटो तो खून नहीं। वह दया भरी दृष्टि से स्वामी जी को देख उनके चरण पकड़ गिड़गिड़ाने लगा, 'प्रभु यह मेरे स्वामी के पिताश्री दिवंगत महाराज का चित्र है। हम उनकी पूजा करते हैं। आपके इस आदेश का पालन नहीं कर सकते चाहे आप हमें श्राप दे अभी जीवन मुक्त कर दें।'

तब स्वामी जी उस सेवक से बोले, 'प्रिय सेवक, तुम मेरे भगवान् की उत्पत्ति हो। मैं तुम्हें श्राप क्यों देने लगा? फिर यह तो एक चित्र है, कोई तुम्हारे महाराज के पिता जीवित अवस्था में थोड़े ही हैं? फिर तुम्हें इनको जूते से मारने पर आपत्ति क्यों? कोई तुम जीवित महाराज का अपमान थोड़े ही कर रहो हो?'

अलवर नरेश एक बुद्धिमान व्यक्ति थे। वह तुरंत स्वामी जी का संकेत समझ गए। अपने सिंहासन से उठ उन्होंने स्वामी जी की चरण धूलि अपने मस्तक पर लगाईं और बोले, 'प्रभु, मुझे मेरे प्रश्न का उत्तर मिल गया। मैं नतमस्तक हो अपने व्यवहार पर शर्मिन्दा हूँ। मुझे क्षमा करें।'

तत्पश्चात स्वामी जी ने पत्थर की मूर्ति में भगवान होने का महत्व बताया। उन्होंने कहा, 'हे राजन, मूर्ति में भगवान विद्यमान हैं, इसे सत्य समझो। भगवान सर्व-व्याप्त हैं। क्या भूल गए कि पत्थर के स्तम्भ से ही भगवान् नरसिंह प्रगट हुए थे। जिस प्रकार महर्षि शुकदेव के पिता महर्षि भगवान् वेदव्यास जी अपनी आत्मा को एक वृक्ष में प्रवेश करा वृक्ष से एकाकार हो गए थे, उसी प्रकार भगवान् इन पत्थर की मूर्तियों से एकाकार हैं। जब भगवान् श्री आदिशंकराचार्य जी एक राजा के मृत शरीर में प्रवेश कर सकने की क्षमता रखते हैं, तब भगवान् तो कहीं भी, इन पत्थर की मूर्तियों में भी समाहित हैं। भगवान् श्री आदिशंकराचार्य जी ने 'शंकराचार्य दर्शन' में लिखा है,

**सर्व गतस्थापि ब्राह्मण: उपलब्धर्थ ।**
**स्वामि विशेषो न विषधयते शालग्राम ईव विष्णो ।।**

स्वामी श्री रामानुजाचार्य ने भी 'श्री भाष्य' में लिखा है,

**सर्वग्रोपि भगवान स्वमहिम्मा स्वसाधारण शक्तिमतया ।**
**च उपासक काम पूरनाय चक्षुरादी स्थानमु यश्यो भवति ।।**

अर्थात, ईश्वर अपनी सर्वशक्तियों के साथ सब जगह व्याप्त हैं । वह भक्त की प्राथर्ना स्वीकार करने के लिए पत्थर में भी प्रकट होते हैं। अतः मूर्ति पूजन के पीछे तत्व ज्ञान है, दर्शन है। मूर्ति के माध्यम से अपने नेत्रों से भगवान् को देखा जा सकता है।

भगवान् अथवा देवीओं की मूर्तियों की स्थापना मंदिरों में प्राण प्रतिष्ठा के पश्चात ही की जाती है। अक्सर अपने गृह मंदिरों में भी हम जब विशेष रूप में हरि अथवा देवी की स्तुति करते हैं, जैसे बाल गोपाल रूप में कृष्ण कन्हैया, सालिग्राम के रूप में भगवान् विष्णु, अथवा कुलदेवी या कुलदेवता, वह भी प्राण प्रतिष्ठित ही होते हैं। अतः हम तब किसी चित्र अथवा मूर्ती की स्तुति नहीं कर रहे वरन जीवित प्रभु अथवा देवी की स्तुति करते हैं।

तो बच्चो, आपकी जिज्ञासा अब अवश्य ही शांत हो गई होगी।

अगले अंक में फिर आपको ऐसी ही कोई और नई कहानी के साथ प्रस्तुत होंगे।

# श्रीमदभगवद-भोग व्यंजन खंड

## भोजन से पूर्व भगवान को अर्पित करने की आवश्यकता

हिंदू धर्म शास्त्रों में यह विधान है कि हम भोजन करने से पहले भोजन को भगवान को अर्पित करें, भोग लगाएं, उसके पश्चात्र ही भोजन ग्रहण करें। शुद्ध और उचित आहार भगवान की उपासना का एक अंग है। भोजन करते समय किसी भी अपवित्र खाद्य पदार्थ का ग्रहण करना निषिद्ध है। यही कारण है कि भोजन करने से पूर्व भगवान को भोग लगाने का विधान है, जिससे कि हम शुद्ध और उचित आहार ग्रहण कर सकें। जिस भोजन को हम अपने हृदय में निषिद्ध मानते हों, स्वतः ही जब उस प्रकार का भोजन आप प्रभु को अर्पित करना चाहेंगे तो आपका मन नहीं मानेगा।

अथर्ववेद में कहा गया है कि भोजन को हमेशा भगवान को अर्पित करके ही करना चाहिए। भोजन करने से पहले हाथ, पैर और मुंह को अच्छी तरह से धो लेना चाहिए।

भगवान के भोग लगाने का केवल धार्मिक ही नहीं बल्कि वैज्ञानिक आधार भी है। अगर आप भोजन को क्रोध, वैमनष्य एवं ईर्षा भरे मन से करेंगे, तो वह भोजन सुपाच्य नहीं होगा। अपाच्य भोजन का आपके शरीर और मन पर नकारात्मक प्रभाव पडेगा। अतः भाव शुद्धि के लिए भी भोजन को प्रभु को अर्पित करना आवश्यक है।

आधुनिक युग के कतिपय लोग इस बात को अंधविश्वास की संज्ञा देते हैं। एक बार ऐसा ही प्रश्न हमारे अति पूज्यनीय जगद्गुरू श्री शंकराचार्य कांची कामकोटि जी से किसी व्यक्ति ने किया, 'जगद्गुरू, भगवान को भोग लगाने से भगवान तो उस भोजन को खाते नहीं हैं, और नहीं ही उसके रूप, रंग या

स्वरूप में कोई परिवर्तन होता है। तो क्या भोग लगाना एक अंध विश्वास नहीं है?'

जगद्गुरू पूज्यनीय श्री शंकराचार्य कांची कामकोटि जी ने समझाते हुए कहा कि जिस प्रकार आप मंदिर जाते हो तो प्रसाद के लिए जो भोग आप मंदिर में भगवान के चरणों में अर्पित करते हो, और अर्पण के पश्चात उसको प्रसाद रूप में ग्रहण करते हो, तो क्या उसका आकार, प्रकार और स्वरूप में कोई परिवर्तन होता है? नहीं। ठीक उसी प्रकार जब आप अपने गृह अथवा किसी भी स्थान पर भोजन करने से पहले उसे ईश्वर को अर्पित करते हो, तो वह प्रसाद बन भोजन सुपाच्य हो जाता है। एक तो इस प्रक्रिया से तामस अथवा अग्रहणीत भोजन से बचेंगे, दूसरे शांत हृदय से शुद्धता के साथ भोजन करेंगे, जिससे आपकी पाचन शक्ति को बल मिलेगा।

प्रतिदिन तो हमें भोजन करने से पूर्व भोजन को प्रभु को अर्पित करना ही चाहिए, परन्तु विशेष अवसरों पर विशेष भोग बना प्रभु के चरणों में अर्पित कर उसे प्रसाद रूप में खाने से हृदय की शुद्धि के साथ साथ उचित मनोकामनाएं भी पूर्ण होती हैं, ऐसा शास्त्रों में विधान है। आपको स्मरण होगा की पुत्र प्राप्ति के लिए जब महर्षि गुरुदेव श्री वशिष्ठ जी के निर्देशानुसार महर्षि श्रंगी जी ने चक्रवर्ती सम्राट दशरथ जी के पुत्रेष्ठि यज्ञ का संचालन किया था, तब अग्निदेव खीर की हवि के साथ प्रगट हुए थे। उस खीर को सम्राट दशरथ जी ने अपनी तीनों महारानीओं में यथोचित बांटा, और समय आने पर गृह में चार बच्चों का जन्म हुआ, श्री राम, श्री भरत, श्री लक्ष्मण एवं श्री शत्रुघ्न।

इस अंक में हम आपको खीर की आध्यात्मिक महत्वा एवं उसे बनाने की विधि बताएंगे।

आपको विदित ही है कि खीर मुख्यतः तीन पदार्थों से बनती है, दुग्ध, चावल एवं मीठा। दुग्ध, गौ माँ द्वारा दिया हुआ प्रेम और श्रद्धा का प्रतीक है। चावल माँ भूमि में कड़ी मेहनत और धैर्य के बाद प्राप्त होता है, अतः सुकर्म एवं धैर्य

का प्रतीक है। मीठा भक्ति का प्रतीक है। जब प्रेम, श्रद्धा, सुकर्म, धैर्य एवं भक्ति का मिलन होता है, तब भगवान् प्रगट हो जाते हैं और उनसे मिलन हो जाता है।

## खीर बनाने की वैष्णव विधि

### आवश्यक सामग्री

चावल आधा कटोरी
गाय का दूध १ लीटर
चीनी ३५० ग्राम
बादाम ७ - ८ (कटे हुए)
पिस्ता १२ - १५ (कटा हुआ)
किशमिश १ छोटी कटोरी
चिरौंजी १ छोटी चम्मच
इलायची पाउडर १ छोटी चम्मच

### व्यंजन विधि

खीर बनाने के लिए सबसे पहले चावल को पानी से धोकर एक कटोरी पानी में भिगोने रखे। आधा घंटा के बाद चावलों में से अतिरिक्त पानी निकाल दें। अगर संभव हो तो एक मिक्सर जार में दरदरा पीस लें (ऐच्छिक)। अब बादाम और पिस्ता को भी लंबे और छोटे टुकड़ों में काट लें और एक ओर रख दें।

अब एक मोटे तले वाले बर्तन में दूध डालकर तेज आंच पर गर्म करें। जब दूध में उबाल आने लगे तब चावल को दूध में डालकर मिला दें। अब इसे चम्मच से बीच बीच में चलाते रहें ताकि तले में दूध जले नहीं। कुछ समय बाद गैस की आंच मध्यम पर कर दें और हर १ मिनट बाद चम्मच से दूध को हिलाते रहें।

२० - २५ मिनट में जब दूध गाढ़ा हो जाए और चावल भी पूरी तरह फूल चुके हों तब चीनी और सभी सूखी मेवा को डाल दें, और अच्छी तरह से मिलाएं। अब पात्र का ढक्कन बंद कर १० मिनट तक मध्यम आंच पर पकने दें। इसके पश्चात पात्र का ढक्कन खोलें और इलायची पाउडर डालकर चम्मच से मिला दें।

बस अब तैयार है स्वादिष्ट खीर भगवान् को भोग लगाने के लिए। भगवान् को भोग लगाएं, और परिवार सहित भोग लगी हुई खीर का आनंद लें।

# दीपावली पूजन विधि

कार्तिक मास की अमावस्या के दिन माता लक्ष्मी क्षीर सागर से प्रकट हुई थीं। इसी रात्रि को ही श्री लक्ष्मी जी का भगवान् विष्णु से विवाह हुआ था। माँ लक्ष्मी को प्रसन्न करने हेतु ताकि हमारे जीवन में धन-धान्य की सदैव वर्षा होती रहे, हम दिवाली की रात्रि को माँ लक्ष्मी का पूजन करते हैं। किसी भी पूजन में सर्व प्रथम 'प्रथम पूज्य विघ्न विनाशक श्री गणेश जी' का पूजन आवश्यक होता है, अतः यह दिवाली पूजन भी श्री गणेश स्तुति से ही प्रारम्भ किया जाता है।

## पूजन सामग्री

अगर संभव हो सके तो निम्न पूजन सामग्री की व्यवस्था कर लें।

कलावा, रोली, सिंदूर, अक्षत, फूल, पंचामृत (दूध, दही, घी, शहद, तुलसी), फल, मिठाईयां, पूजा में बैठने हेतु आसन, अगरबत्ती, आरती की थाली। जितनी पूजन सामग्री सुलभता से उपलब्ध हो सके, उतनी ही करें। अगर सब सामग्री उपलब्ध न हो सके, तो इसके लिए व्यथित होने की आवश्यकता नहीं है। ध्यान रखें कि देवी-देवता भाव देखते हैं, कर्मकांड की उतनी महत्वा नहीं।

**पर्वोपचार**

जिस स्थान पर श्री गणेश एवं माँ लक्ष्मी की प्रतिमा स्थापित करनी हो वहां कुछ चावल रखें, फिर उस स्थान पर क्रमश: श्री गणेश और माँ लक्ष्मी की मूर्ति रखें। ऐसी मान्यता है कि माँ लक्ष्मी के साथ भगवान विष्णु की मूर्ति भी माँ के बायीं ओर रखनी चाहिए। सभी पूजन सामग्री भी मूर्तिओं के सामने रख दें।

आसन बिछाकर श्री गणपति एवं माँ लक्ष्मी की मूर्ति के सम्मुख परिवार सहित बैठ जाएं। इसके बाद अपने आपको तथा आसन को इस मंत्र से शुद्धि करें।

**ऊं अपवित्र : पवित्रोवा सर्वावस्थां गतोऽपिवा ।**
**य: स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तर: शुचि : ॥**

इस मन्त्र के उच्चारण के साथ आसन पर, अपने पर एवं अपने परिवार के सदस्यों पर ३-३ बार कुशा या पुष्पादि से छींटें लगायें, फिर आचमन करें।

**ऊं केशवाय नम: । ऊं माधवाय नम: । ऊं नारायणाय नम: ।**

फिर हाथ धोएं और निम्न शुद्धि मंत्र का उच्चारण करें।

**ऊं पृथ्वी त्वयाधृता लोका देवि त्यवं विष्णुनाधृता ।**
**त्वं च धारयमां देवि पवित्रं कुरु चासनम् ॥**

शुद्धि और आचमन के बाद चंदन लगाएं। चंदन लगाते हुए निम्न मन्त्र का उच्चारण करें।

**चन्दनस्य महत्पुण्यम् पवित्रं पापनाशनम् ।**
**आपदां हरते नित्यम् लक्ष्मी तिष्ठतु सर्वदा ।।**

इसके पश्चात् अपने एवं समस्त परिवार के हाथों पर कलावा लगाएं।

**गणपति पूजन**

हाथ में पुष्प लेकर गणपति का ध्यान करें।

**गजाननम्भूतगणादिसेवितं कपित्थ जम्बू फलचारुभक्षणम् ।**
**उमासुतं शोक विनाशकारकं नमामि विघ्नेश्वरपादपंकजम् ।।**

इसके पश्चात श्री गणेश जी की आरती करें।

**जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा ।**
**माता जाकी पार्वती पिता महादेवा ।।**
**जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा ।**

**एकदंत दयावंत चार भुजा धारी ।**
**माथे सिंदूर सोहे मूसे की सवारी ।।**
**जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा ।**

**पान चढ़े फूल चढ़े और चढ़े मेवा ।**
**लड्डूअन का भोग लगे संत करे सेवा ।।**
**जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा ।**

**अंधन को आँख देत कोढ़िन को काया ।**
**बांझन को पुत्र देत निर्धन को माया ।।**
**जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा ।**

**सूर शाम शरण आये सफल कीजिये सेवा ।**
**जय गणेश जय गणेश जय गणेश देवा ।।**

**माता जाकी पार्वती पिता महादेवा ।।**

**माँ लक्ष्मी पूजन**

श्री गणेश जी के पूजन के पश्चात अब माँ लक्ष्मी जी का पूजन उनकी आरती से करें।

**ॐ जय लक्ष्मी माता, मैया जय लक्ष्मी माता ।**
**तुमको निशिदिन सेवत, हरि विष्णु धाता ।।**
**ॐ जय लक्ष्मी माता, मैया जय लक्ष्मी माता ।**

**उमा, रमा, ब्राह्माणी, तुम ही जग माता ।**
**सूर्य चन्द्रमा ध्यावत, नारद ऋषि गाता ।।**
**ॐ जय लक्ष्मी माता, मैया जय लक्ष्मी माता ।**

**दुर्गा रुप निरन्जनी, सुख सम्पत्ति दाता ।**
**जो कोई तुमको ध्याता, ऋद्धि-सिद्धि पाता ।।**
**ॐ जय लक्ष्मी माता, मैया जय लक्ष्मी माता ।**

**तुम पाताल निवासिनी, तुम ही शुभ दाता ।**
**कर्म प्रभाव प्रकाशिनी, भवनिधि की त्राता ।।**
**ॐ जय लक्ष्मी माता, मैया जय लक्ष्मी माता ।**

**जिस घर में तुम रहती, सब सदगुण आता ।**
**सब सम्भव हो जाता, मन नही घबराता ।।**
**ॐ जय लक्ष्मी माता, मैया जय लक्ष्मी माता ।**

**तुम बिन यज्ञ न होते, वस्त्र न कोई पाता ।**
**खान – पान का वैभव, सब तुमसे आता ।।**
**ॐ जय लक्ष्मी माता, मैया जय लक्ष्मी माता ।**

**शुभ - गुण मंदिर सुन्दर, क्षीरोदधि जाता ।**
**रत्न चतुर्दश तुम बिन, कोई नही पाता ।।**
**ॐ जय लक्ष्मी माता, मैया जय लक्ष्मी माता ।**

**महालक्ष्मी जी की आरती जो कोई जन गाता ।**
**उर आनन्द समाता, पाप उतर जाता ।।**
**ॐ जय लक्ष्मी माता, मैया जय लक्ष्मी माता ।**
**ॐ जय लक्ष्मी माता, मैया जय लक्ष्मी माता ।**
**तुमको निशिदिन सेवत, हरि विष्णु धाता ।।**

**जगदीश आरती**

माँ लक्ष्मी की आरती के पश्चात जगदीश आरती का गान करें।

**ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे ।**
**भक्तजनों के संकट क्षण में दूर करे ॥**
**ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे ।**

**जो ध्यावै फल पावै, दुख बिनसे मन का ।**
**सुख-संपत्ति घर आवै, कष्ट मिटे तन का ॥**
**ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे ।**

**मात-पिता तुम मेरे, शरण गहूं मैं किसकी ।**
**तुम बिनु और न दूजा, आस करूं जिसकी ॥**
**ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे ।**

**तुम पूरन परमात्मा, तुम अंतरयामी ।**
**पारब्रह्म परेमश्वर, तुम सबके स्वामी ॥**
**ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे ।**

**तुम करुणा के सागर, तुम पालनकर्ता ।**
**मैं मूरख खल कामी, कृपा करो भर्ता ॥**
**ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे ।**

**तुम हो एक अगोचर, सबके प्राणपति ।**
**किस विधि मिलूं दयामय तुमको मैं कुमति ॥**
**ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे ।**

**दीनबंधु दुखहर्ता, तुम ठाकुर मेरे ।**
**अपने हाथ उठाओ, द्वार पड़ा तेरे ॥**
**ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे ।**

**विषय विकार मिटाओ, पाप हरो देवा ।**
**श्रद्धा-भक्ति बढ़ाओ, संतन की सेवा ॥**
**ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे ।**

**तन-मन-धन और संपत्ति, सब कुछ है तेरा ।**
**तेरा तुझको अर्पण क्या लागे मेरा ॥**
**ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे ।**

**जगदीश्वरजी की आरती जो कोई नर गावे ।**
**कहत शिवानंद स्वामी, मनवांछित फल पावे ॥**
**ॐ जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे ।**

**मनु जाहि राचेउ मिलिहि सो बरु सहज सुन्दर सावरो ।**
**करुना निधान सुजान सीलु सनेहु जानत रावरो ॥**

**एही भाँति गौरी असीस सुनी सिय सहित हिय हरषीं अली ।**
**तुलसी भवानी पूजी पुनि-पुनि मुदित मन मन्दिर चली ॥**

**जानी गौरी अनुकूल सिय हिय हरषु न जाइ कहि ।**
**मञ्जुल मङ्गल मूल बाम अङ्ग फरकन लगे ॥**

आरती के पश्चात भगवान् एवं माँ को प्रणाम करें और सबको आरती दें। तद्पश्चात सबको प्रसाद वितरण करें।

विघ्नविनाशक श्री गणेश, माँ लक्ष्मी एवं भगवान् विष्णु आप पर और आपके परिवार पर सदैव प्रसन्न रहें।

**बही-खाता पूजन विधि**

दीपावली से हिन्दू नव-वर्ष भी प्रारम्भ होता है। अतः इस दिन नया बही खोता खोल उसकी पूजा की जाती है।

नए बही खाते के पूजन हेतु उपरोक्त विधि से श्री गणेश, माँ लक्ष्मी एवं जगदीश आरती के पश्चात नए खाता पुस्तक के प्रथम पृष्ठ पर लाल कुमकुम से स्वास्तिक का चिह्न बनाएं।

स्वास्तिक के चिह्न के नीचे **'ॐ श्री गणेशाय नमः'** लिखें। उसके बाद **'श्री लक्ष्मी सदाय सहाय'** एवं **'शुभ लाभ'** लिखें।

इसके पश्चात बही खाते पर पुष्प चढ़ाएं, और रोली चावल छिड़कें। फिर बही खाते को प्रणाम कर उसे उपयोग में लाना प्रारम्भ कर दें।

**मुख्य सम्पादक डॉ यतेंद्र शर्मा** - सन १९५३ में एक हिन्दू सनातन परिवार में जन्मे डॉ यतेंद्र शर्मा की रूचि बचपन से ही सनातन धर्म ग्रंथों का पठन पाठन एवं श्रवण में रही है। संस्कृत की प्रारम्भिक शिक्षा उन्होंने अपने पितामह श्री भगवान् दास जी एवं नरवर संस्कृत महाविद्यालय के प्राचार्य श्री सालिग्राम अग्निहोत्री जी से प्राप्त की और पांच वर्ष की आयु में महर्षि पाणिनि रचित संस्कृत व्याकरण कौमुदी को कंठस्थ किया। उन्होंने तकनीकी विश्वविद्यालय ग्राज़ ऑस्ट्रिया से रसायन तकनीकी में पी.अच्.डी की उपाधी विशिष्टता के साथ प्राप्त की। सन १९८९ से डॉ यतेंद्र शर्मा अपने परिवार सहित पर्थ ऑस्ट्रेलिया में निवास कर रहें हैं, तथा पश्चिमी ऑस्ट्रेलिया के खनन उद्योग में कार्य रत हैं।

सन २०१६ में उन्होंने अपने कुछ धार्मिक मित्रों के साथ एक धार्मिक संस्था 'श्री राम कथा संस्थान पर्थ' की स्थापना की। यह संस्था श्री भगवान् स्वामी रामानंद जी महाराज (१४वीं- १५वीं शताब्दी) की शिक्षाओं से प्रभावित है तथा समय समय पर गोस्वामी तुलसी दास जी रचित श्री राम चरित मानस एवं अन्य धार्मिक कथाओं का प्रवचन, सनातन धर्म के महान संतों, ऋषियों, माताओं का चरित्र वर्णन एवं धार्मिक कथाओं के संकलन में अपना योगदान करने का प्रयास करती है।

## श्री राम कथा संस्थान पर्थ

**कार्यालय:** ३५ मायना रिट्रीट, हिलरीज, पर्थ, ऑस्ट्रेलिया – ६०२५
**वेबसाइट:** https://shriramkatha.org
**ई-मेल:** srkperth@outlook.com
**टेलीफोन:** +६१ (०८) ९४०१ १५४३